वैज्ञानिक चिंतन की आवाज़

तर्कशील पथ

TARKSHEEL

मई–जून 2025



30/-

दिमागों के जाले उतारना, घरों के जाले उतारने से भी कठिन कार्य है।

बांट दिया इस धरती को

बांट दिया इस धरती को, क्या चांद-सितारों का होगा?
नदियों को कुछ नाम दिए, बहती धारों का क्या होगा?
शिव की गंगा भी पानी है, आब-ए-जमजम भी पानी है
पंडित भी पिएं मुल्ला भी पिएं, तो पानी का मजहब क्या होगा?
एक है सूरज चांद है एक, एक हवा में सांस है सबकी
तो पूछो इन फिरकापरस्तों से, क्या हवा भी नई चलाओगे?
नसलो का करें जो बटवारा, रहबर वो कौम का ढोंगी है
सवाल तो बस एक ही है, क्या अल्लाह ने मंदिर तोड़ा था या
राम ने मस्जिद तोड़ी है?
बांट दिए इस धरती को
कोई हिंदू है, कोई मुसलमान, कोई सिख कोई इसाई
बस हमने इंसान न होने की है कसम खाई।

– करण वीर मेहरा

मेरे लिए विचारों का मनुष्य से परे कोई अस्तित्व नहीं है। मेरे लिए मनुष्य और केवल मनुष्य ही सभी चीजों और विचारों का निर्माता है। वह सभी चमत्कारों का कर्ता है और वह प्रकृति की सभी शक्तियों का स्वामी है। हमारी इस दुनिया की सबसे खुबसूरत चीजें मानव श्रम और उसके कुशल हाथों से बनाई गई हैं। हमारी संपूर्ण सोच और विचार श्रम की प्रक्रिया से निकलते हैं और इस बात की पुष्टि कला, विज्ञान और प्रौद्यौगिकी का इतिहास भी करता है। मैं आदमी को सलाम करता हुँ क्योंकि इस दुनिया में मुझे ऐसा कुछ भी नहीं दिखता जो उसकी बुद्धिमता, उसकी कल्पना शक्ति, उसके अनुमान का साकार रूप न हो।

–मैक्सिमम गोरकी

मुख्य संपादक
कुलदीप डँगर खेड़ा
kuljittarkshil@gmail.com
9781925566
संपादकी मंडल
गुरमीत अम्बाला
tarksheeleditor@gmail.com
94160 36203
जसवंत मोहाली (98555-30721)
अजायब जलालाना (94167 24331)
कृष्ण कायत (98961 05643)

विदेशी प्रतिनिद्धि
अवतार बाई, वैनकुवर
+1 672 558-5757
बीरबल भदौड़, कैलगिरी
+ 1 204 894-4371
बलदेव रहिपा, टरांटो
+ 1 41 688 17202
अच्छर सिंह खरलवीर (U.K.)
+ 1 44 748 635 1185
अवतार गोंदारा (U.S.A.)
+ 1 (559) 375-2589

पत्रिका शुल्क :-
वार्षिक : 150/- रू.
विदेश : वार्षिक : 40 यू.एस.डॉलर
रचनाएं, पत्र व्यवहार व शुल्क भेजने के लिए पताः
मुख्य कार्यालय
तर्कशील भवन, संघेडा बाईपास
तर्कशील चौंक, बरनाला-148101
01679-241466, 98769 53561
tarkshiloffice@gmail.com
पत्रिका को पढ़ने के लिए लॉग ऑन करें:
www.tarksheel.org
Tarksheel Mobile App :
Readwhere.com

राजिन्दर भदौड़, प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी की तरफ से तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.) द्वारा अप्पू आर्ट प्रैस, शाहकोट (जलन्धर) से मुद्रित करके मुख्य कार्यालय तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.), बरनाला, (पंजाब) से तर्कशील सोसायटी पंजाब व हरियाणा के माध्यम से वितरण के लिए जारी किया।

तर्कशील पथ पत्रिका हेतु शुल्क
पंजाब नैशनल बैंक में
तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.) के नाम से
खाता सं. 0044000100282234
IFSC: PUNB0004400 में जमा करा सकते है।
एंव पत्रिका भेजने के लिए एड्रेस व शुल्क की स्क्रीन शॉट/रसीद मोबाइल नम्बर +91 98156 70725 पर वट्सएप कर दें।

इस अंक में

आनलाईन पत्रिका को पढ़ने के लिए :
www.tarksheel.org,
http://tarksheelblog.wordpress.com
सर्च करें: tarksheel :
www.archive.org
Readwhere.com

संपादकीय

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना होता है। एक व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक विभिन्न प्रकार के औपचारिक और अनौपचारिक स्रोतों से शिक्षा प्राप्त करता रहता है। शिक्षा प्राप्त करने से व्यक्ति का दृष्टिकोण और व्यावहारिक स्तर विस्तृत होता है। उसका दृष्टिकोण, विचारधारा और सोच शिक्षा से प्रभावित होते हैं। किसी भी व्यक्ति की सोच और विचारधारा उसके द्वारा ग्रहण की गई या उसे प्रदान की गई शिक्षा पर निर्भर करते हैं। सभी देशों का आर्थिक विकास लोगों के अच्छे स्वास्थ्य और अच्छी शिक्षा प्रणाली पर निर्भर करता है। अब प्रश्न यह उठता है कि हमारी वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली व्यक्ति के सर्वांगीण विकास को कितना बढ़ावा देती है। इस प्रश्न का हम भारत में किए गए विभिन्न सर्वेक्षणों के आंकड़ों के आधार पर उत्तर नहीं में दे सकते हैं। इन विभिन्न सर्वेक्षणों में बेरोजगारी, मानसिक स्वास्थ्य, शारीरिक स्वास्थ्य, सामाजिक स्वास्थ्य आदि के आंकड़ों को देखा जा सकता है।

वास्तव में भारतीय शिक्षा प्रणाली गंभीर संकट से गुजर रही है। यह संकट केंद्र सरकार,आर एस एस और कॉरपोरेट जगत की मिलीभगत का नतीजा है। वे अपने एजेंडे और जरूरत को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षा नीतियों का निर्माण कर रहे हैं। शिक्षा के विनाश की शुरुआत, शिक्षा को राज्य सूची से हटाकर समवर्ती सूची में शामिल करने से शुरू होता है। समवर्ती सूची में भी राज्य सरकार और केंद्र सरकार मिलकर निर्णय लेते हैं। लेकिन केंद्र की मौजूदा भाजपा सरकार ने राज्य सरकारों की ओर से आंखें मूंदकर शिक्षा के भगवाकरण के अपने एजेंडे लागू करना शुरू कर दिये है। इस मंशा को पूरा करने के लिए केंद्रीय सरकार ने नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 बनाई है। इस नीति के तहत पी एम श्री स्कूल योजना शुरू की गई है, जिसमें सभी राज्यों के सरकारी स्कूलों को सीधे केंद्र के अधीन लाया गया है। इसी क्रम में पाठ्यक्रम में आमूलचूल परिवर्तन करके देशभक्तों, क्रांतिकारी और प्रख्यात वैज्ञानिकों की जीवनियाँ और उनके सिद्धांतों को पाठ्यक्रम से हटा दिया गया है। इसके अलावा इस नई शिक्षा नीति के मुताबिक अब कोई भी व्यक्ति भले उसे छात्रों को पढाने का कोई भी अनुभव न हो वो भी सरकारी विद्यालयों की कक्षाओं में आकर पढ़ा सकता है। हम अच्छी तरह जानते हैं कि ये लोग कौन होंगे जो स्कूलों में आकर पढ़ाएंगे। यह आर एस एस और केंद्र सरकार का गठबंधन पाठ्यक्रम में मिथक को इतिहास में बदलने की पूरी कोशिश में लगा हुआ है। हाल ही में दिल्ली विश्वविद्यालय के लक्ष्मी बाई कॉलेज में 'गोबर अनुष्ठान' कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें कॉलेज की प्रिंसिपल डॉक्टर प्रत्यूषा वासला कक्षाओं की दीवारों पर गोबर पोतती हुई नजर आई और उन्होंने इसे भारत की प्राचीन तकनीक होने का दावा भी किया। इस प्रिंसिपल ने यह हास्यस्पद कृत्य नींद में नहीं किया बल्कि इसके पीछे शिक्षा के भगवाकरण करने का एजेंडा छिपा हुआ है।

इस नई शिक्षा नीति के तहत उच्च शिक्षा की स्थिति और भी बदतर होने वाली है। महाविद्यालयों और विश्वविद्यालय को स्ववित्तपोषित बनाने की आड़ में निजी हाथों में सौंपा जा रहा है। ऐसा करने से उच्च शिक्षा महँगी होने के कारण गरीबों की पहुंच से बाहर हो जाएगी। कॉर्पोरेट घरानों के लिए सस्ते श्रम की मांग को पूरा करने के लिए व्यवसायिक शिक्षा का नारा दिया जा रहा है। अपने नापाक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शिक्षा को विनाश की दिशा में धकेलना, हमारे लिए चिंता और चिंतन का विषय है। शिक्षा के इस गंभीर संकट के बारे में लोगों में स्पष्ट समझ के लिए वैज्ञानिक चेतना पैदा करने की आवश्यकता है। आम जनता में जागरूकता लाकर एक जन आंदोलन खड़ा करने की जरूरत है, जिससे सरकारों की ऐसी भ्रष्ट और आमजन विरोधी नीतियों को खारिज किया जा सके।

विज्ञान बनाम अंधविश्वास

- बालेन्दु गोस्वामी

विज्ञान हमें वह वास्तविकता दिखाता है जो साबित करी जा सकती है। परन्तु आप किसी मान्यता और अंधविश्वास को साबित नहीं कर सकते। मान्यताएं समय, स्थान और परिस्थिती के अनुसार बदलती रहती हैं। कई बार स्थान बदलने पर एक दुसरे से नितांत विपरीत मान्यताएं भी प्रचलन में पायीं जातीं हैं क्यों कि इनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं होता इसीलिये ये वास्तविकता नहीं मान्यताएं हैं।

असल में अंधविश्वास व्यक्ति को मानसिक विश्राम व सुविधा देता है। मनुष्य की प्रवृत्ति ऐसी है कि वो वही विश्वास करना चाहता है जो उसके अनुकूल और सुविधाजनक हो, ये कोई आवश्यक नहीं कि वो सत्य भी हो। वास्तविकता जो कि निश्चित रूप से सत्य है, असुविधाजनक भी हो सकती है। तभी झूठ का अस्तित्व भी है क्यों कि अक्सर लोग झूठ पर विश्वास करते हैं और झूठ पर तो आपको हमेशा अंधविश्वास ही करना पड़ेगा, क्यों कि यदि आँख खोल ली तो आपको पछतावा होगा।

सत्य पर विश्वास करना कोई जरूरी नहीं, सत्य तो सत्य है आप विश्वास करो या न करो। वास्तविकता तो वास्तविकता ही रहेगी आपके विश्वास करने या न करने से कोई फर्क नहीं पड़ता। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं और सत्य को विश्वास की आवश्यकता नहीं। जैसे कि अग्नि प्रत्यक्ष दिखाई देती है और उसकी सत्यता ये है कि वो जलाती है आप चाहे विश्वास करो या न करो वो तो जलाएगी ही।

अन्धविश्वासी स्वयं पर विश्वास नहीं करते बल्कि हमेशा ऐसा सुना है, लिखा है, पढ़ा है, फलाने ने कहा है या मान्यता है और साथ ही कि हम तो मानते हैं। असल में वो जानते नहीं है बल्कि मानते हैं। सही बात तो ये है कि जिसका अस्तित्व ही नहीं है उसको जाना तो जा ही नहीं सकता, केवल माना जा सकता है, आँख बंद करके मान लो बस, सवाल पूछने का अधिकार नहीं है तुम्हें और यदि सवाल पूछने भी हैं तो केवल मान्यता के बारे में ही पूछना परन्तु शक करने की गुंजाइश नहीं है। धर्म यही तो कहता है कि जो शास्त्रों में लिखा है उसे मानो, जानने की कोशिश मत करो और शक मत करो यदि सवाल भी पूछने हैं तो केवल शास्त्रों से सम्बंधित ही पूछो।

जहाँ भी आपको विश्वास करने का दुराग्रह किया जाये तो सावधान हो जाना और शक भी करना कि कहीं आपकी आँखों पर विश्वास की पट्टी बांधकर धोखा तो नहीं दिया जा रहा, याद रखना धोखा वही देते हैं जिन पर आपने विश्वास किया है। धर्म, ईश्वर, शास्त्र, ज्योतिष, परलोक, अलौकिक चिकित्साएँ, मान्यताएं ये सभी विश्वास का आग्रह करती हैं और वो भी अंधे विश्वास का, शक न करना और उस पर भी तुर्रा ये कि यदि शक किया तो ये काम नहीं करेंगी।

विज्ञान कभी आकर आपसे नहीं कहेगा कि मुझे मानो, वो तो आपको मानना पड़ेगा ही, और कोई दूसरा रास्ता ही नहीं है। एक महत्वपूर्ण बात और भी आपने इन अन्धविश्वासी लोगों से सुनी होगी कि इनके टोने टोटके, मान्यताएं उनपर ही लागू होते हैं जो इनपर विश्वास करते या मानते हैं, सब पर नहीं। देखो कितना अच्छा रास्ता है बच निकलने का, तुम्हारे ऊपर ये लागू नहीं हो रहा या असर नहीं हो रहा क्यों कि तुम मानते नहीं हो। तो फिर झगड़ा ही क्या है मानना छोड़ दो सारी परेशानी खुद ब खुद ख़त्म हो जाएगी।

सारे धर्म सत्य को ही स्थापित करने में जुटे हैं और स्वयं को सत्य बता रहे हैं ईश्वर की अवधारना के सहित और रहित कोई फर्क नहीं पड़ता। सचाई तो ये है कि एडवोकेसी तो असत्य की होती है सत्य तो सत्य है और जितने धर्म हैं सब एडवोकेसी में ही लगे हैं। परन्तु आग को मानो या न मानो वो तो जलायेगी ही और आग को जान सकते हो तुम मानने की जरूरत नहीं।

महान नायक की जेल डायरी से:

जीवन का उद्देश्य

जीवन का उद्देश्य मन को नियंत्रित करना नहीं है, बल्कि उसे उचित रूप से विकसित करना है। मृत्यु के बाद मोक्ष प्राप्त करना संभव नहीं है, लेकिन इस संसार में इसका सर्वोत्तम उपयोग करना संभव है। सत्य, अच्छाई और सुन्दरता को न केवल ध्यान में बल्कि दैनिक जीवन के वास्तविक अनुभव में भी अभिव्यक्त किया जाना चाहिए। सामाजिक प्रगति किसी एक की उन्नति पर नहीं बल्कि अनेक लोगों की समृद्धि पर निर्भर करती है। आत्मिक लोकतंत्र या विश्व बंधुत्व तभी प्राप्त किया जा सकता है जब सामाजिक, राजनीतिक और औद्योगिक जीवन में अवसर की समानता हो। **- रूसो**

भारतीय शिक्षा और गोबर का लेप

– धर्मेन्द्र आजाद

हाल ही में दिल्ली विश्वविद्यालय के लक्ष्मीबाई कॉलेज में जो 'गोबर अनुष्ठान' आयोजित हुआ, वो सिर्फ़ हास्यास्पद नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था की सड़ांध मारती सच्चाई का एक जीवंत उदाहरण भी है। कॉलेज की प्रिंसिपल डॉ. प्रत्यूषा वसाला ने कुछ क्लासरूम्स की दीवारों पर गोबर पुतवाया, और ख़ुद भी हाथ बँटाया, और गर्व से इसे 'प्राचीन लेकिन आज भी प्रासंगिक टेक्नोलॉजी' बताया – उनका दावा था कि इससे कमरे ठंडे रहते हैं।

प्रिंसिपल मैडम के इस 'ज्ञान कर्म' के उत्तर में दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष और छात्रों ने भी 'श्रद्धापूर्वक' इस परंपरा का सम्मान' किया – और उन्हीं के कार्यालय की दीवारों को गोबर से विभूषित कर दिया। उनका कहना था कि यदि गोबर इतना लाभकारी है, तो इसका पहला फायदा कॉलेज की मुखिया को ही मिलना चाहिए। यह घटना सिर्फ एक मज़ाक नहीं, बल्कि उस गंभीर और भयावह प्रक्रिया की झलक है, जिसमें शिक्षा अब किताबों से नहीं, दीवारों पर चढ़ाए जा रहे गोबर से संचालित हो रही है।

नई शिक्षा नीति (NEP 2020) के नाम पर जो परिवर्तन किए गए हैं, वे 'भारतीयकरण' या 'संस्कृतिकरण' की आड़ में दरअसल वैज्ञानिक सोच की निर्मम हत्या हैं। छ्क्क्स्श्व के पाठ्यक्रम से डार्विन का विकासवाद, आवर्त सारणी, फ्रेंच क्रांति, मुग़ल इतिहास और लोकतांत्रिक आंदोलनों जैसे महत्वपूर्ण विषयों को हटा दिया गया है – वो सारे हिस्से जो छात्रों को सोचने, तर्क करने और प्रगतिशील बनने की ताक़त देते थे। अब शिक्षा तर्क का नहीं, आस्था का विषय बना दी गई है।

लेकिन हमला केवल पाठ्यक्रमों तक सीमित नहीं है – शिक्षा प्रणाली की रीढ़ को भी योजनाबद्ध तरीके से तोड़ा जा रहा है। 2024–25 के बजट में उच्च शिक्षा के लिए आवंटन में 17% और त्रष्ट के लिए 61% की कटौती की गई है। भारत पहले ही शिक्षा पर त्रष्ठक्क का बेहद कम हिस्सा खर्च करता है – और अब उसे और घटाया जा रहा है। 2014 से 2023 के बीच 89,441 सरकारी स्कूल बंद किए जा चुके हैं। यानी, सबसे वंचित तबकों के लिए शिक्षा के दरवाज़े बंद किए जा रहे हैं ।

आज भारतीय विश्वविद्यालय विचारों की प्रयोगशालाएं नहीं रहीं । पाठ्यक्रमों से लेकर शिक्षकों की नियुक्तियों तक, हर जगह एक खास विचारधारा का वर्चस्व थोपा जा रहा है। IIT से लेकर गांव के स्कूलों तक, ज्ञान की जगह कथा, विज्ञान की जगह पुराण, और बहस की जगह आस्था घुसाए जा रहे हैं।

दुनिया जहां AI, स्पेस टेक्नोलॉजी, क्वांटम फिजिक्सि और ग्रीन इनोवेशन की ओर तेज़ी से बढ़ रही है, वहीं हम भारतीय नींबू मिर्च और सूर्य नमस्कार जैसी परंपराओं में फंसे हुए हैं।

शिक्षा यदि तर्क और वैज्ञानिक चेतना से रहित हो, तो वह समाज को प्रगतिशील नहीं, अंधभक्त बनाती है। हमारे राजनेता यही चाहते हैं – एक ऐसा भारत, जहाँ छात्र सवाल न करें। जहाँ ज्ञान नहीं, भक्ति हो; सोच नहीं, केवल श्रद्धा हो।

और यह कोई अतिशयोक्ति नहीं – यह सब हमारे सामने, हमारी आंखों के सामने, हमारे बच्चों के दिमाग़ में, और हमारे शिक्षा के भविष्य में गूंथा जा रहा है – बिल्कुल उसी गोबर की तरह।

हिन्दू या मुस्लिम के अहसासात को मत छेड़िये
अपनी कुरसी के लिए जज्बात को मत छेड़िये

हममें कोई हूण, कोई शक, कोई मंगोल है
दफ़्न है जो बात, अब उस बात को मत छेड़िये

ग़र ग़लतियाँ बाबर की थीं; जुम्मन का घर फिर क्यों जले
ऐसे नाजुक वक्त में हालात को मत छेड़िये

हैं कहाँ हिटलर, हलाकू, जार या चंगेज़ ख़ाँ
मिट गये सब, क़ौम की औक़ात को मत छेड़िये

छेड़िये इक जंग, मिल–जुल कर गरीबी के खिलाफ़
दोस्त, मेरे मजहबी नग्मात को मत छेड़िये

– अदम गोंडवी

भारतीय समाज में तर्कशीलता का महत्व

– कृष्ण कायत

भारत एक प्राचीन और विविधता से भरा देश है, अपने समृद्ध सांस्कृतिक और सामाजिक विरासत के लिए जाना जाता है। यह समाजिक परंपराओं, मान्यताओं और रिति –रिवाजों से गहराई से जुड़ा हुआ है। हालांकि, समय के साथ, सामाजिक और आर्थिक बदलावों ने भारत में तर्कशीलता के महत्व को ओर अधिक प्रासंगिक बना दिया है। तर्कशीलता न केवल समाज के सतत विकास के लिए आवश्यक है,बल्कि यह एक प्रगतिशील और न्याय संगत समाज की नींव भी रखती है। तर्कशीलता किसी भी व्यक्ति के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।यह न केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया को बेहतर बनाती है बल्कि हमारी सोच को भी तर्कसंगत और व्यावहारिक बनती है। तर्कशीलता का अर्थ है, ''तथ्यों और प्रमाणों के आधार पर सोचने, समझने और निर्णय लेने की क्षमता।'' इस लेख में हम तर्कशीलत के महत्व और चुनौतियों के बारे में समझने की कोशिश करेंगे करेंगे:

1. सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करना :-

भारतीय समाज में दहेज प्रथा, जातिवाद, बाल विवाह और अंधविश्वास जैसी कई सामाजिक कुरीतियां रही हैं। तर्कशीलता इन कुरीतियों को खत्म करने में मदद करती है। उदाहरण के लिए, राजा राममोहन राय ने तर्क और विचारशीलता के माध्यम से सती प्रथा जैसी अमानवीय प्रथा का विरोध किया और इसे खत्म करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2. शिक्षा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास

तर्कशीलता, शिक्षा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करती है। यह लोगों को अंधविश्वास और पाखंड से मुक्त कर तर्कसंगत सोच विकसित करने में मदद करती है। भारत में इस सोच को बढ़ावा देने के लिए वैज्ञानिक और तर्कशीलता की भावना को संविधान में भी शामिल किया गया है।

3. लोकतंत्र की मजबूती

लोकतांत्रिक व्यवस्था में तर्कशीलता की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है। एक जागरूक और तर्कशील नागरिक ही अपने अधिकारों और कर्तव्यों को सही तरीके से समझ सकता है। वह भेदभाव, झूठे वादों और राजनीतिक शोषण से बचने में सक्षम होता है।

4. सांप्रदायिकता और विभाजन से मुक्ति

तर्कशीलता भारतीय समाज में धार्मिक और सांप्रदायिक तनाव को कम कर सकती है। यह हमें यह समझने में मदद करती है कि मानवता का मूल उद्देश्य शांति और सह–अस्तित्व है, न कि धार्मिक या सांप्रदायिक श्रेष्ठता।

5. महिलाओं के अधिकार और समानता

भारतीय समाज में तर्कशीलता महिलाओं के अधिकारों और समानता की दिशा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह बालिकाओं की शिक्षा, महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता को प्रोत्साहित करती है।

भारतीय समाज में तर्कशीलता की चुनौतियां

1. परंपराओं और अंधविश्वासों का प्रभाव

भारतीय समाज में पारंपरिक और धार्मिक मान्यताओं का गहरा प्रभाव है। कई लोग बिना सवाल किए इन मान्यताओं का पालन करते हैं, जो तर्कशीलता के विकास में बाधा डालता है।

2. शिक्षा की कमी

भारत के कई क्षेत्रों में आज भी शिक्षा का अभाव है। बिना उचित शिक्षा के, लोगों में तर्कशीलता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना कठिन हो जाता है।

3. सामाजिक दबाव

परिवार और समाज का दबाव अक्सर तर्कशील सोच को दबा देता है। व्यक्ति स्वतंत्र रूप से सोचने और निर्णय लेने से डरता है, क्योंकि इससे सामाजिक अस्वीकृति का डर रहता है।

4. राजनीति और विचारधारात्मक प्रभाव

कुछ राजनीतिक और धार्मिक समूह तर्कशीलता को हतोत्साहित करते हैं और लोगों को भावनात्मक और वैचारिक आधार पर नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं।

तर्कशीलता को बढ़ावा देने के उपाय

1. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा : शिक्षा प्रणाली में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा देना आवश्यक है।

2. मीडिया की भूमिका: मीडिया को तर्कशीलता और जागरूकता फैलाने में अपनी जिम्मेदारी निभानी चाहिए।

3. आम जनता की भागीदारी : सामुदायिक संगठनों और व्यक्तियों को तर्कशीलता पर आधारित वार्ता और चर्चाओं को प्रोत्साहित करना चाहिए।

4. संविधान और कानून का समर्थन : संविधान के अनुच्छेद 51ए (ज) के अनुसार, वैज्ञानिक सोच और मानवता के प्रति जिम्मेदारी को बढ़ावा देना हर नागरिक का कर्तव्य है। इसे व्यावहारिक रूप में लागू किया जाना चाहिए।

भारतीय समाज में तर्कशीलता एक प्रगतिशील, समानतापूर्ण और न्यायसंगत समाज के निर्माण की कुंजी है। यह हमें सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और विभाजनकारी विचारधाराओं से मुक्त करती है। तर्कशीलता के विकास के बिना समाज का वास्तविक विकास संभव नहीं है।

आइए, हम सभी अपने जीवन में तर्कशीलता को अपनाएं और इसे दूसरों के जीवन में भी प्रेरित करें। एक तर्कशील समाज ही भारत को उसके वास्तविक गौरव और प्रगति की दिशा में ले जा सकता है।

9896105643

जीवन दर्शन

लेकिन इन सबके बावजूद हमें जीना है, जीवन के प्रति अपने कर्तव्य को निभाना है, नए संकल्प के साथ संघर्ष जारी रखना है और ऐसी व्यवस्था की स्थापना के लिए प्रयास करना है। जिसमें अत्याचार और लूट के लिए कोई स्थान न हो। जिसमें तर्क का बोलबाला हो और अंधविश्वास के लिए कोई स्थान न हो। कल्पित ईश्वर और कल्पित देवताओं के कारण यह अंधविश्वास पैदा होता है। इस अंधविश्वास ने धर्मों की नींव रखी, जिनमें अपार मानव रक्त बहा। यदि अंधविश्वास की जड़ें मिटा दी जाएं तो यह निश्चितता के साथ कहा जा सकता है कि मनुष्य वैज्ञानिक जीवन दर्शन या जीवन अन्वेषण का स्वामी बन सकता है। जिससे वह अपने आस-पास के वातावरण का सही नजरिए से विश्लेषण कर जीवन को सफल बना सके।

- नाटककार गुरशरण सिंह

अच्छे दिन

कृष्ण कायत
मंड़ी डबवाली

निकल पड़े हैं
अलसुबह
ये हाथ
कूड़ा बीनने।
वक्त के
बेरहम हाथों से
दो वक्त की
रोटी छीनने।
सारा कूड़ा बीनकर
मेहनत तेरी
इस शहर की
शोभा बढ़ाती है।
पर, सच
ये भी है कि
तेरी गंदी
झुग्गी-झोंपड़ी
इस सुंदर शहर का
मुंह चिढ़ाती है ।
सभ्य जनों का
बिखराया कचरा
उठा कर
तुम ले जाते हो।
करते हो साफ़-सफाई
फिर भी
कचरे वाले कहलाते हो ।
शाइनिंग इंडिया में भी
चमक न आई तुझ पर
न फील-गुड में
गुड़ फील किया
हाथ के बहकावे में
बहकते रहे हर बार
अब फिर से कौन
तुम्हें बहका गये हैं ?
नियति ना बदली तेरी
कचरे से रोटी बीनने की
जबकि सभी के
अच्छे दिन आ गये हैं ...

पूँजीवाद और महाविनाश की आहट

–डा. नवनीत

पृथ्वी यूँ तो ब्रह्माण्ड का एक बहुत ही छोटा सा हिस्सा है, लेकिन साथ ही यह सबसे विशिष्ट हिस्सा भी है। इस विशिष्टता का कारण यह है कि पृथ्वी ही एकमात्र ज्ञात स्थान है जहाँ ब्रह्माण्ड की सबसे महान और विशिष्ठ घटना घटती है और वह घटना है जीवन!

अपनी शुरुआत से लेकर कई उतार चढ़ावों और लगातार विकास के साथ जीवन आज अत्यंत वैविध्यपूर्ण और विशाल रूप में पृथ्वी पर मौजूद है

अलग-अलग जीव प्रजातियों की संख्या की बात की जाये तो अभी तक 15,80,000 विभिन्न जीवों की प्रजातियों की पहचान की जा चुकी है और वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यह संख्या 20,00,000 से 80,00,000 तक हो सकती है।

यह जानना भी दिलचस्प होगा कि यह संख्या धरती पर जीवन की शुरुआत से आज तक मौजूद रही तमाम जैव प्रजातियों का सिर्फ 1 प्रतिशत है।

मतलब हम कह सकते हैं कि शुरू से अभी तक धरती पर कुल मिलाकर 2 से 8 खरब तक विभिन्न जैव प्रजातियाँ रही हैं।

लेकिन यह विविधतता सिर्फ प्रजातियों की संख्या तक ही सीमित नहीं है। बल्कि एक ही प्रजाति में भी आनुवांशिक विविधताएँ भी विद्यमान रहती हैं। इसके अलावा एक ही प्रजाति के अलग-अलग जीवों के बीच आपस में और विभिन्न प्रजातियों के बीच भोजन श्रृंखला के माध्यम से पारस्परिक सम्बन्ध भी होते हैं।

एक विशेष स्थान पर मौजूद सभी जीवों के समूह, जिसमें हम यानी मनुष्य भी शामिल हैं, और उनके बीच पारस्परिक संबंधों को पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) कहते हैं।

इस प्रकार भिन्न-भिन्न जीव प्रजातियों की विविधता, एक ही प्रजाति के बीच की आनुवांशिक विविधता व पारिस्थितिकी तंत्र की विविधता- ये सब मिलकर समग्र रूप से जैव विविधता का निर्माण करते हैं।

यही जैव विविधता यानि सजीव प्रकृति जब निर्जीव प्रकृति के साथ मिलती है, तो हमारे पूरे परिवेश का निर्माण होता है।

दूसरे शब्दों में कहें तो अन्य सभी जीवों की तरह ही एक प्रजाति के रूप में मानव के आपसी सम्बन्ध और फिर प्रकृति के साथ भी इसके सम्बन्ध इसी पूरे तंत्र का हिस्सा हैं।

हालाँकि दूसरे जीवों और मानव में एक बड़ा अंतर यह है कि मानव प्रकृति को इसका हिस्सा होते हुए भी, चेतन रूप से इसे प्रभावित करता है, इसको निरंतर बदलता है और इस प्रक्रिया में खुद को भी बदलता है; जबकि अन्य जीव अपनी सहजवृत्ति के साथ प्रकृति का हिस्सा मात्र होते हैं, इसको चेतन रूप में प्रभावित नहीं करते।

इस तरह से हम समझ सकते हैं कि जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र और समग्र रूप से प्रकृति का हमारे जीवन में कितना महत्त्व है।

बहरहाल यह तो हुई जीव विज्ञान की बात, लेकिन इससे इतर भी जैव विविधता हमारी ज़िन्दगी में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है. मसलन हमारा सांस्कृतिक विकास, कला, साहित्य, कविता, भाषा आदि सभी चीजें, किसी न किसी रूप में जैव विविधता के साथ हमारे सम्बन्धों से प्रभावित होते रहे हैं। बहुत शुरू से ही जीव जंतुओं के साथ हमारे तमाम संबंधों ने हमारी कल्पनाओं, लोक कथाओं, हमारे सामाजिक अनुष्ठानों और इस प्रकार समग्र रूप से हमारी संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

मनुष्य की चेतना को विकसित करने में भी उसके आसपास की सजीव और निर्जीव प्रकृति की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

जैव विविधता के हमारे जीवन पर पड़ने वाले तमाम स्पष्ट और अस्पष्ट प्रभाव बहुमुखी होते हैं तथा ये हमारे पूरे जीवन के तमाम अनुभवों में नजर आते हैं; लेकिन मौजूदा दौर में हमारे और सजीव- निर्जीव प्रकृति के बीच के हमारे सम्बन्ध व समग्र रूप से सम्पूर्ण जैव विविधता ही एक भयानक संकट के दौर से गुजर रहे हैं--एक ऐसा संकट जो प्राकृतिक नहीं, बल्कि मानव और प्रकृति पर थोप दी गयी पूँजीवादी व्यवस्था की देन है।

कुछ दशक पहले वैज्ञानिकों ने ऑस्ट्रेलिया में मेंढक की एक दुर्लभ प्रजाति खोजी थी। पेट को फुलाने वाले इस मेंढक की मादा अपने बच्चों को पूर्ण विकसित होने तक अपने पाचन

तंत्र में रखती है और विकसित हो जाने के बाद उनको अपने मुँह के रास्ते बाहर निकाल देती है।

खोज के कुछ समय बाद ही आज यह मेंढ़क धरती से विलुप्त घोषित किया जा चुका है। सिर्फ यही नहीं पूरी दुनिया की एक तिहाई उभयचर (पानी और जमीन दोनों जगह रहने वाले जीव) विलुप्ति के कगार पर खड़े हैं। लेकिन बात सिर्फ उभयचर जीवों की भी नहीं है। उत्तरी अमेरिका के कुछ विश्वविद्यालयों द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार सम्पूर्ण जीवन ही खतरे के निशान पर पहुँच चुका है।

इन अध्ययनों की मानें तो पृथ्वी अपनी छठी महान जैव विलुप्ति के चक्र में प्रवेश कर गयी है!

इससे पहले धरती पर 5 बार ऐसी जैव विलुप्तियाँ आ चुकी हैं, जिन्होंने पृथ्वी को लगभग जीवन विहीन बना दिया था।

पिछली प्रलय साढ़े छः करोड़ साल पहले आयी थी जब डायनासोरों का अंत हुआ था।

पूँजीवादी व्यवस्था और स्वयं जीवन के बीच चल रहे मौजूदा टकराव के आने वाले परिणाम को दर्शाता है।

क्या आप जानते हैं कि यह सम्भावित परिणाम क्या हो सकता है?

यह हो सकता है जैव विविधता का खात्मा और जीवन विलुप्ति व महाविनाश!

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से ही जैव विलुप्ति की यह दर, अद्वितीय रूप से बढ़ रही है और पिछले 40 वर्षों में तो इसकी गति कई गुणा तेज हो चुकी है।

दुनिया में वन्य जीवन की देखरेख करने वाली संस्था 'वर्ल्ड वाइल्डलाइफ फण्ड' की 'लिविंग प्लेनेट इंडेक्स' यानि "LPI" नामक स्कीम के तहत 3038 विभिन्न रीढ़धारी जीव प्रजातियों (जिनमें मछलियाँ, उभयचर, सरीसृप, पक्षी और स्तनधारी जीव आते हैं) की जनसंख्या व अन्य पहलुओं पर नजर रखी जाती है।

इस योजना के अन्तर्गत जारी किये गये साल 2014 के आँकड़ों के अनुसार 1970 से 2010 के बीच निगरानी में आने वाली इन सभी प्रजातियों की जनसंख्या में 52 प्रतिशत की कमी दर्ज की गयी है।

इसको अलग-अलग इलाकों के हिसाब से देखें तो 1970 से 2010 के बीच ऐसे इलाकों में जहाँ तापमान चरम पर नहीं पहुँचता है, यह कमी 36 प्रतिशत है लेकिन उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में जनसंख्या में यह कमी 56 प्रतिशत रही।

मीठे पानी के जैव आवासों में यह कमी 76 प्रतिशत दर्ज की गयी।

और अधिक विस्तार में जाएँ तो दक्षिण अमेरिका के नव उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में इसी समय अन्तराल के दौरान यह कमी 83 प्रतिशत दर्ज की गयी है व दक्षिण पूर्वी एशिया व ऑस्ट्रेलिया में यह आँकड़ा 67 प्रतिशत का है।

LPI के अनुसार इसमें से 45 प्रतिशत कमी तो आवासों के खत्म होने से आयी है, 37 प्रतिशत कमी मनुष्य के सीधे हस्तक्षेप (यथा शिकार, खेती या मछली मारना) की वजह से और बची हुई यानि 18 प्रतिशत कमी जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और बीमारियों आदि की वजह से है।

प्रजातियों के लुप्त होने की मौजूदा गति साढ़े छह करोड़ साल पहले हुई महाविलुप्ति के समय की गति को भी मात करती नजर आ रही है।

कुछ सर्वे बताते हैं कि सन 1500 से 1980 के बीच रीढ़धारियों की विलुप्ति की यह गति पिछली बार यानि साढ़े छह करोड़ साल पहले के मुकाबले, 24 से 85 गुणा ज़्यादा रही।

1980 के बाद से, जबकि नवउदारवाद ने अपने पाँव पसार लिए, यह दर 71 से 297 गुणा ज़्यादा हो गयी है।

अगर यही दर जारी रहती है तो अगली एक सदी से भी कम समय में ये सभी 3038 प्रजातियाँ पूरी तरह से दुनिया से विलुप्त हो जाएँगी।

प्रतिष्ठित अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान पत्रिका 'NATURE' में साल 2011 के एक अंक में पिछली महाविलुप्ति के दौरान की दरों और मौजूदा समय की दर की तुलनाओं के बारे में छपा था और ज़्यादा से ज़्यादा अनुदार तुलनाएँ भी एक ही तरफ इशारा कर रही थीं; वो ये कि महाविनाश की कहानी छठी बार फिर से दोहरायी जाने वाली है. और यह सिर्फ कुछ ही सदियों की बात है।

इन तमाम शोधकर्ताओं के अनुसार इससे पहले के महाप्रलय प्राकृतिक कारणों जैसे ज्वालामुखी, उल्कापिंड या भूकम्पों के कारण हुए थे, लेकिन इस बार कारण उल्का या ज्वालामुखी नहीं बल्कि मनुष्य होगा।

पश्चिम के पूँजीवादी विज्ञानी हालाँकि अध्ययन तो अच्छा करते हैं और नतीजे भी निकाल देते हैं; लेकिन इसके मूल कारण को कभी नहीं पकड़ते।

मूल कारण मनुष्य नहीं है; ये सभी बुर्जुआ पर्यावरणविद व वैज्ञानिक बेशर्मी के साथ तर्क देते हैं कि मानव का स्वभाव मूलरूप से विनाशकारी है. ये लोग मनुष्य के स्वभाव, सामाजिक व्यवस्था व संस्कृति तक के कारण मनुष्य के डीएनए , बायोलॉजी और जैविक विकास में तलाशते हैं. और इस तरह भूख, गरीबी, युद्ध आदि के साथ प्रकृति के विनाश का जिम्मेदार भी ''समाज व्यवस्था'' की बजाय, ''मानव स्वभाव'' को बता दिया जाता है;

लेकिन ये महानुभाव भूल जाते हैं कि मानव का स्वभाव कोई जड़ वस्तु नहीं है जो लाखों वर्षों पहले, जब मनुष्य का वानर से उद्गम हुआ था, से अभी तक मानव समाज के विकास के साथ मानव का स्वभाव भी विकसित हुआ है।

असल में मानव समाज और उसके साथ मानवीय स्वभाव का ऐतिहासिक और भौतिक आधार मानव, मानव की उत्पादक गतिविधियों और प्रकृति के बीच द्वंद्वात्मक संबंधों पर टिका होता है।

इसका मतलब है कि प्रकृति को बदलने की प्रक्रिया यानि उत्पादक गतिविधियों के पूरे इतिहास के दौरान मानव समाज भी तब से आज तक उत्पादक गतिविधियों के अनुसार विकसित हुआ है और इस तरह से मानव स्वभाव भी मानव समाज और सामाजिक व्यवस्थाओं के अनुसार विकसित होता आया है।

प्रकृति को बदलने की प्रक्रिया में मानव खुद को भी बदलता ही बदलता है, और यह बदलाव लाखों वर्ष से जारी है और आगे भी जारी रहेगा।

जाहिर है कि मनुष्य और मनुष्य का स्वभाव इस महाविनाश के लिए जिम्मेदार नहीं है।

मनुष्य तो पृथ्वी पर 2 लाख साल से विद्यमान है; और यह जैव विलुप्ति की दर में तेजी महज 400 साल से ही आई है. तो फिर क्या कारण हो सकता है?

हम अगर गौर करें तो पाते हैं कि पूँजीवाद भी इसी दौरान यानि पिछले 400 साल से मानव सभ्यता पर काबिज हुआ है।

मुनाफ़ा आधारित पूँजीवादी व्यवस्था मुनाफ़े के लिए मनुष्य और प्रकृति दोनों का ही निर्मम दोहन करती है और पिछले 100 साल में तो यह दोहन अपनी चरम अवस्था पर जा पहुँचा है।

फिर नवउदारवादी नीतियाँ लागू होने के बाद की स्थिति को देखने के बाद पूँजीवाद की भूमिका किसी भी सन्देह की गुंजाईश नहीं छोड़ती है।

तो चलिये, देखते हैं कि पूँजीवाद इसमें आख़िर किस तरह से मुख्य और एकमात्र भूमिका निभा रहा है: मानव समाज और पृथ्वी की जैव विविधता के बीच सबसे महत्वपूर्ण अन्तर्सम्बन्ध हमारी भोजन श्रृंखला यानी खेती, पशुपालन और मछली पालन के माध्यम से बनता है।

दस हजार साल पहले हुई कृषि क्रान्ति के बाद और उससे पहले भी हालाँकि मानवीय क्रियाकलापों की वजह से कुछ जैव प्रजातियों को विलुप्ति की तरफ धकेला था, जिनमें 'मैमथ' जैसे बड़े जीव भी शामिल थे, लेकिन यह भी पक्के तौर पर नहीं कहा जा सकता है कि इसका कारण सिर्फ मानवीय गतिविधियाँ ही थीं या फिर जलवायु परिवर्तन का भी इसमें बड़ा योगदान रहा था।

हालाँकि मानव प्रकृति और इस प्रकार साथ ही साथ जैव विविधता को भी शुरू से ही प्रभावित करता रहा है लेकिन फिर पूँजीवाद में ऐसा क्या हुआ कि जैव विविधता इतनी तेजी से विनाश की तरफ जाने लगी?

इसके लिए हमको पूँजीवाद की कार्यप्रणाली को समझना होगा. पूँजीवादी उत्पादन का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है उत्पादित मालों का संग्रह।

पूँजीवाद का यही गुण इसको इससे पहले की समाज व्यवस्थाओं से अलग करता है।

पूँजीवाद से पहले के उत्पादन के अन्तर्गत लोग, मुख्यत: अपने उपभोग के लिए मालों का उत्पादन करते थे, जबकि पूँजीवाद में उत्पादन बेचने और मुनाफ़ा कमाने के लिए किया जाता है।

तो इसका जैव विविधता के खात्मे की परिस्थितियाँ पैदा होने में क्या योगदान है?

वह यह कि जितनी भी मानवेतर जैव प्रजातियाँ, माल उत्पादन की प्रक्रिया के दायरे से बाहर होती हैं, उनकी कोई ज़रूरत नहीं होती और वे खत्म होना शुरू हो जाती हैं।

लेकिन यह जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र के खात्मे का एकमात्र कारण नहीं है, बल्कि यह तो पूँजीवाद के उन कई विध्वंसकारी परिणामों में से एक है जो लगातार मानव और प्रकृति दोनों को खत्म करते जा रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ की खाद्य और कृषि संस्था के आँकड़ों के अनुसार लगभग 18 जीवों की प्रजातियाँ और 155 फसलों

की प्रजातियाँ ही ऐसी हैं जो मालों के तौर पर दुनिया में पैदा की जाती हैं और खरीदी बेची जाती हैं।

इनमें से भी केवल कुछ ही ऐसी हैं जिनसे ज़्यादा मुनाफ़ा होता है और ये ही ग्लोबल मार्केट में ज़्यादा हावी हैं।

तो इससे क्या होता है? पहली बात तो यह कि न सिर्फ खेती के लिए बल्कि लकड़ी, खनिजों की लूट व अन्य संसाधनों के दोहन के लिए भी वनों की अन्धाधुन्ध कटाई पूरी दुनिया में की जा रही है जिसकी वजह से वनों में रहने वाले जन्तुओं का प्राकृतिक आवास पूरी तरह से नष्ट हो रहा है।

यही हाल पहाड़ों के खनन का है. आवास नष्ट होने के चलते इन सभी जैव प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट आ खड़ा हुआ है जिसकी परिणिति इनकी विलुप्ति में हो रही है।

जैव प्रजातियों के लिए आवास नष्ट होने की यह प्रक्रिया सिर्फ वनों तक सीमित नहीं है बल्कि जलीय जीवों के सामने भी इसी तरह का संकट है क्योंकि पानी भी इतना अधिक प्रदूषित हो चुका है कि अधिकतर जीवों के लिए इसमें रह पाना लगातार असम्भव होता जा रहा है।

कृषि की बात करें तो ज़्यादा मुनाफ़े के लिए ज़्यादा से ज़्यादा फसल उत्पादन के चक्कर में कीटनाशकों, कृत्रिम उर्वरकों का विवेकहीन इस्तेमाल किया जा रहा है, जिसकी वजह से कृषि भूमि की प्राकृतिक उर्वरा शक्ति लगभग खत्म हो चुकी है और साथ में इस भूमि पर और मिट्टी के अंदर रहने वाले जीव भी।

लेकिन ये विनाशकारी प्रभाव सिर्फ कृषि भूमि तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि ये गैर कृषि भूमि और जल स्रोतों को भी अपनी चपेट में ले चुके हैं।

कीटनाशकों व रसायनों के अन्धाधुन्ध इस्तेमाल की वजह से फायदा सिर्फ पूँजीपति को, खाद्य कम्पनियों को और रसायन कम्पनियों को होता है।

अधिकतर जनता को फिर भी भूखा नंगा ही मरना पड़ता है और प्रकृति की कीमत पर उत्पादित खाद्य और अन्य सामान मुनाफ़े की भेंट चढ़ जाता है।

मुनाफ़े की अन्धी दौड़ को कायम रखने के लिए पूँजीवाद ने प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र को नष्ट करके अपना ही एक कृत्रिम परिस्थितिकी तंत्र बना लिया है जिसका हिस्सा कुछ खास तरह के मालों के रूप में बिकने वाली फसलें और जैव प्रजातियाँ हैं. बाकी सब जो इससे बाहर हैं, उन पर विलुप्ति का खतरा मंडरा रहा है।

लेकिन यह सिर्फ कृषि की बात नहीं है, मुनाफ़ा आधारित तमाम अन्य उद्योग भी हर तरह के माल का उत्पादन इंसानी ज़रूरत के हिसाब से नहीं, बल्कि मुनाफ़े के लिए करते हैं; जिसमें प्रकृति का वैसे ही दोहन होता है और यहाँ भी बदले में प्रकृति को प्रदूषण और पारिस्थितिकी तंत्र का विनाश ही मिलता है।

ग्लोबल वार्मिंग और उसके प्रभाव सीधे-सीधे इसी व्यवस्था की देन हैं जो जलवायु परिवर्तन के जरिये जैव आवासों को नष्ट करने में एक महती भूमिका अदा कर रहे हैं।

एक अनुमान के अनुसार अगले कुछ दशकों में ग्लोबल वार्मिंग के चलते आर्कटिक और अंटार्कटिक की बर्फ पिघल जाएगी और समुद्र किनारे बसी तमाम मानव बस्तियाँ जलमग्न हो जाएँगी, पहले से संकटग्रस्त जैव विविधता पर जो कहर टूटेगा वह अलग से।

साफ है कि पूँजीवाद किस प्रकार इस पूरे महाविनाश के लिए जिम्मेदार है।

पूँजीवाद मानवजाति की एक ऐसी बीमारी है जो परजीवी की तरह न केवल मानवजाति को बल्कि पूरी प्रकृति को खाये जा रही है।

और अगर यह यूँ ही जारी रहा तो जैसा कि रोजा लक्ज़मबर्ग ने कहा था कि ''समाजवाद न आने की कीमत मानवता को बर्बरता के तौर पर चुकानी पड़ेगी।''

लेकिन आज के सन्दर्भ में रोजा लक्ज़मबर्ग का यह कथन भी अधूरा प्रतीत होता है. आज हम निश्चित तौर पर दृढ़ता के साथ कह सकते हैं और न सिर्फ कह सकते हैं बल्कि हमें यह कहना ही चाहिए कि ''समाजवाद के न आने की कीमत हमको न केवल बर्बरता से बल्कि महाविनाश से चुकानी पड़ेगी। समाजवाद न आया तो मानवता ही नहीं, पृथ्वी से जीवन ही खत्म हो जाएगा।''

तो हमको समस्या पता है, समस्या का कारण पता है और इस कारण का निवारण भी पता है।

इसलिए आज के समय में यह जरूरी है कि इस बात को समझा जाए कि सिर्फ और सिर्फ मेहनतकश के नेतृत्व में होने वाली क्रांति और उसके द्वारा पूँजीवाद का विनाश व समतामूलक समाजवादी व्यवस्था की स्थापना ही मानवता, प्रकृति और पृथ्वी पर जीवन को को बचा सकती है। इसके अलावा और कोई चारा मानव के पास नहीं है।

सुनीता विलियम्स की अंतरिक्ष यात्रा

सुनीता विलियम्स एक अनुभवी अंतरिक्ष यात्री हैं, जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (ISS) पर 9 महीने से अधिक समय बिताया। उनका मिशन, जो जून 2024 में बोइंग स्टारलाइनर के पहले मानव मिशन के रूप में शुरू हुआ था, तकनीकी दिक्कतों के कारण मार्च 2025 तक लंबा हो गया। अंततः वे स्पेसएक्स क्रू-9 मिशन के साथ पृथ्वी पर लौटीं।

अंतरिक्ष में जीवन : एक अनोखा और रोमांचकारी अनुभव :

अंतरिक्ष में रहना पृथ्वी से बिल्कुल अलग अनुभव है। माइक्रोग्रैविटी (लगभग शून्य गुरुत्वाकर्षण) की वजह से वहां वस्तुएं, पानी और यहाँ तक कि इंसान भी हवा में तैरते हैं। यह न केवल रोमांचक होता है, बल्कि शरीर और मस्तिष्क के लिए भी चुनौतीपूर्ण होता है।

* ISS हर 90 मिनट में पृथ्वी का एक चक्कर लगाता है, जिससे एक दिन में 16 सूर्योदय और 16 सूर्यास्त होते हैं।

* समय का कोई प्राकृतिक अहसास न होने की वजह से अंतरिक्ष यात्री एक निर्धारित शेड्यूल के अनुसार काम करते हैं।

* पानी हवा में तैरने लगता है, इसलिए गीले तौलिए और नो-रिंस शैम्पू से सफाई करनी पड़ती है।

* माइक्रोग्रैविटी के कारण स्वाद की अनुभूति कम हो जाती है, इसलिए मसालेदार और तीखा खाना ज्यादा पसंद किया जाता है।

* खाना डिब्बाबंद या डिहाइड्रेटेड (सूखा) होता है, जिसे पानी मिलाकर तैयार किया जाता है।

* ISS पर चाकू और कांटे का उपयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि माइक्रोग्रैविटी में चीजें उड़ सकती हैं।

* अंतरिक्ष में हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं और मांसपेशियों की ताकत घटने लगती है, क्योंकि वहां शरीर के वजन का उपयोग नहीं होता।

* इस नुकसान को रोकने के लिए रोज़ाना 2 घंटे व्यायाम करना जरूरी होता है।

* ट्रेडमिल पर दौड़ते समय पट्टियों से खुद को बांधना पड़ता है, ताकि हवा में न तैरें।

* सुनीता ने 900 घंटे से अधिक वैज्ञानिक अनुसंधान में बिताए।

* अंतरिक्ष में पौधे कैसे उगते हैं? - यह प्रयोग मंगल और चंद्रमा जैसे मिशनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

* बैक्टीरिया और वायरस अंतरिक्ष में कैसे व्यवहार करते हैं? - यह शोध भविष्य की बीमारियों और दवाओं के विकास के लिए जरूरी है।

* अंतरिक्ष में चलना असंभव होता है, इसलिए स्पेसवॉक के दौरान स्पेससूट में ऑक्सीजन और पानी की सप्लाई दी जाती है।

* सुनीता ने कई स्पेसवॉक किए और ISS के बाहरी हिस्से की मरम्मत की।

* जनवरी 2025 में, उन्होंने 62 घंटे 6 मिनट के स्पेसवॉक रिकॉर्ड के साथ इतिहास रचा।

* सुनीता ने कई बार स्कूलों के छात्रों से वीडियो कॉल के जरिए बातचीत की।

* वे अपने परिवार से वीडियो और ईमेल के जरिए संपर्क में रहती थीं।

* सोने के लिए स्लीपिंग बैग को दीवार से बांधना पड़ता था, ताकि हवा में तैरने न लगें।

अंतरिक्ष में जीवन की चुनौतियाँ और विज्ञान के समाधान :

• पानी:

* मूत्र और पसीने से पानी फिल्टर करके फिर से पीने योग्य बनाया जाता है।

* यह तकनीक पृथ्वी पर सूखा-प्रभावित इलाकों में भी मदद कर सकती है।

• शौचालय :

* साधारण फ्लश सिस्टम काम नहीं करता, इसलिए वैक्यूम सक्शन सिस्टम से अपशिष्ट को खींचकर संग्रहित किया जाता है।

* मूत्र को रिसाइकल कर पानी में बदला जाता है।

• मनोवैज्ञानिक प्रभाव :

* महीनों तक पृथ्वी से दूर रहना मानसिक रूप से चुनौतीपूर्ण होता है।

* संगीत, किताबें और वीडियो कॉल तनाव कम करने में मदद करते हैं।

• भोजन :

* ISS पर हर 4 महीने में ताजा आपूर्ति भेजी जाती है।

* वैज्ञानिक अब ऐसे खाद्य पदार्थ विकसित कर रहे हैं, जो मंगल मिशन के दौरान उगाए जा सकें।

• स्वास्थ्य :

* हड्डियों और मांसपेशियों को स्वस्थ रखने के लिए नियमित व्यायाम और डॉक्टरों की निगरानी जरूरी होती है।

* माइक्रोग्रैविटी में दवाएं अलग तरह से काम करती हैं, इसलिए वहां दवाओं के असर पर शोध किया जाता है।

सुनीता विलियम्स की यह असाधारण यात्रा वैज्ञानिक खोजों और तकनीकी नवाचारों से भरी थी। यह हमें सिखाती है कि विज्ञान और मानव जिज्ञासा सीमाओं को कैसे पार कर सकती है।

* क्या अंतरिक्ष में कॉलोनी बसाना संभव है?

* क्या हम मंगल और चंद्रमा पर खेती कर सकते हैं?

* क्या माइक्रोग्रैविटी में नई दवाओं की खोज हो सकती है?

ये सवाल सिर्फ वैज्ञानिकों के लिए नहीं हैं–बल्कि हर किसी के लिए हैं, जो नए ज्ञान की तलाश में है।

भगत सिंह



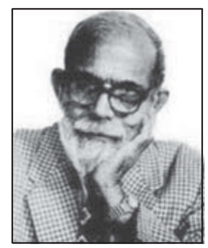
आँखें बंद करके मत पढ़ो, यह मत सोचो कि किताबों में जो लिखा है वह सही है। पढ़ें, विचार करें, आलोचना करें। इसकी सहायता से नये विचार उत्पन्न करने का प्रयास करें।

कोई भी व्यक्ति जो प्रगति का समर्थक है, उसे अवश्य ही पुराने विश्वास की हर बात की आलोचना करनी चाहिए। इस पर अविश्वास करना होगा और इसके हर पहलू की जांच करनी होगी। लोकप्रिय धारणा के एक बिंदु की गहन जांच करनी होगी। कोरा विश्वास और अंध विश्वास खतरनाक है। यह मन को कुंद कर देता है और व्यक्ति को प्रतिगामी बना देता है।

पिस्तौल और बम क्रांति नहीं लाते, बल्कि क्रांति की तलवार विचारों से तेज होती है।

वे (अंग्रेज़) मुझे मार सकते हैं, लेकिन वे मेरे विचारों को नहीं मार सकते। वे मेरे शरीर को कुचल सकते हैं, लेकिन वे मेरे विचारों को कुचलने में सक्षम नहीं होंगे।

डॉ. अब्राहम टी. कावूर



जो व्यक्ति अपने चमत्कारों की जांच नहीं होने देता वह धोखेबाज है। जो चमत्कारों की जांच करने का साहस नहीं करता वह मूर्ख है। जो बिना जाँचे विश्वास कर लेता है वह मूर्ख है।

दुनिया में जो कुछ भी होता है वह ब्रह्मांड के आंतरिक नियमों के कारण होता है। यहां कोई चमत्कार नहीं है, लेकिन कुछ रहस्य जरूर हैं। हमने अपने पूर्वजों के कई रहस्यों को सुलझाया है। आज के कई रहस्यों को कल के वैज्ञानिक सुलझा सकते हैं। जो चमत्कार आज भी अनसुलझे रहस्य है उन्हें चमत्कार कहना मूर्खता है।

भूत-प्रेत, देवता, परी, विश्वास रखने वाले बहुत से देवदूत और रोशनी में लोग मन के भ्रम के कारण ही अंधेरे में ये चीजें देखते हैं। उसी डर की वजह से जो बचपन में उनके मन में बैठा दिया जाता है। ज्यादातर लोग इसके पास जाकर जांच करने की हिम्मत नहीं करते। जिन लोगों ने साहस के साथ और वैज्ञानिक तरीके से इन बातों की जांब की है। वे जानते हैं कि ये बातें दृश्य भ्रम या मानसिक भ्रम के कारण होती है।

भूत की झांझरें

– रशपिंदरपाल कौर

दिनेश और आकाश अपने गांव के ठीक बगल में शहर के आदर्श स्कूल में आठवीं कक्षा के छात्र थे। वे बचपन के घनिष्ठ मित्र थे। उनके परिवारों के भी एक- दूसरे के साथ अच्छे संबंध थे। दिनेश के माता-पिता की गांव में ही एक छोटी सी दुकान थी और उसके पिता आस-पास के कई गांवों में चिकित्सा का अभ्यास भी करते थे। आकाश एक किसान का बेटा था और खेत में बने हुए एक छोटे से घर में रहता था। दोनों दोस्त सुबह साइकिल से स्कूल जाते थे। गांव के बाहरी इलाके से गुजरने वाली छोटी सी नहर उनके स्कूल के जाने वाले रास्ते के साथ-साथ जाती थी। नहर के कल-कल बहते पानी की आवाज सुनकर और पेड़ों की ठंडी-ठंडी छाया के नीचे -नीचे जाकर,वह साइकिल से स्कूल का सफर मिनटों में पूरा कर लेते थे।

वे दोनों अपनी कक्षा के प्रतिभाशाली छात्र थे। सभी शिक्षक उनसे बहुत प्यार करते थे। स्कूल से घर आने के बाद दोनों सबसे पहले घर के लिए मिला हुआ होमवर्क करते और फिर शाम को गांव के खेल के मैदान में खेलने के लिए चले जाते। गांव के सभी लड़के अलग-अलग टोलियाँ बनाकर खेलते थे। एक शाम,खेल के दौरान गांव में उस घटना की चर्चा हो रही थी, जहां गांव के पास ही एक खेत में झांझरों की आवाज सुनाई देती थी। गांव के लोगों की तरह ज्यादातर लड़को का मानना था कि यह किसी भूत का काम है। लेकिन कॉलेज मे पढने वाले लड़के इस बात को मानने को तैयार नहीं थे। अगले दिन स्कूल जाते समय दिनेश और आकाश भी इस घटना पर चर्चा करते रहे। स्वाभाविक रूप से उसी दिन हिंदी विषय के अध्यापक ने अंधविश्वासों के बारे में पाठ पढ़ाया और समझाया कि आज के समय में अंधविश्वास की कोई जगह नहीं है, यह सब गुजरे जमाने की बातें हैं, लेकिन ज्यादातर लोग आज भी भ्रम में फंसकर अपना कीमती समय और पैसा बर्बाद कर रहे हैं।

जब अध्यापक ने अपनी बात पूरी कर ली तो दिनेश ने अध्यापक से एक प्रश्न पूछने की अनुमति मांगी, जब अध्यापक सहर्ष सहमत हो गए तो दिनेश कहने लगा, ''सर,आपने बिल्कुल सही कहा है लेकिन गांवों में हर घटना को अंधविश्वास से जोड़कर देखा जाता है। आजकल हमारे गांव में खेतों में भूतों की झांझर की आवाज सुनने की बात हर कोई कर रहा है।'' अध्यापक ने दिनेश को यह पश्न पुछने की बधाई दी और कहा, ''बेटा, ज्ञान के प्रकाश के फैलने से ही अज्ञानता का यह अंधकार मिटता है, विज्ञान ने हमें स्पष्ट रूप से समझाया है कि हर घटित होने वाली घटना के पीछे कोई ना कोई कारण आवश्य होता है, अगर कारण ढूंढ लिया जाए तो सच्चाई सामने आ जाती है, इस भूतों की झांझरों की आवाजों वाली घटना के पीछे भी कोई न कोई कारण जरूर होगा, इस कारण को ढूंढना अत्यंत आवश्यक है, अगर कारण ढूंढ लिया तो सच्च सामने आ जाएग।'' जब पीरियड खत्म हुआ तो अगले शिक्षक आए और पूरी कक्षा के छात्रा भूत की झांझरों की आवाज की इस घटना की सच्चाई जानने के लिए बात कर रहे थे।

उन्होंने घर आकर अपने स्कूल के अध्यापक की बातों की चर्चा अपने अविभावकों से की और कॉलेज के नौजवानों से भी इस बात का जिक्र किया और वे कालेज के लड़के अध्यापक की विज्ञानिक समझ वाली बातों को सुन कर बहुत खुश हुए और कहने लगे, ''बच्चों, जल्दी ही हम इस घटना को जांच करके देखेंगे।'' और उन्होंने प्रातः जाँच शुरू कर दी। दिनेश, आकाश और कॉलेज के लड़के शाम को उस खेत की तरफ गए, यहां से झांझरों की आवाज आ रही थी। वे वहां यह देखकर हैरान रह गए कि वहां एक आदमी खेत मे बने कमरे मे रह रहा है जो कि खेत मालिक का नौकर था। लड़कों ने उससे खेत मे से झांझरों की आवाज आने की बात की और उसका रहस्य जानने की कोशिश की,तो वह उनकी यह बात सुनकर जोर-जोर से हंसने लगा और उसने इस आवाज का भेद उनको बताया। इस भेद को जानकर सभी लड़के बहुत खुश हुए। रात का अंधेरा होने पर वो सभी घर लोट आए।

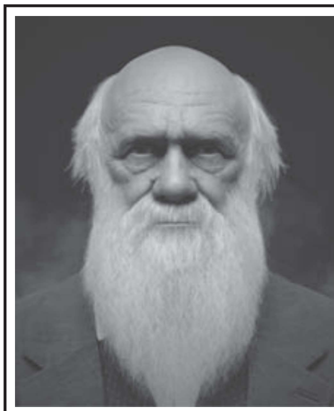
सुबह स्कूल जाते समय उनकी साइकिलें खुशी-खुशी में हवा से बातें करती हुई दौड़ रही थी। वे इस रहस्ह को सभी को बताने के लिए बहुत उत्सुक थे। जब हिन्दी के अध्यापक कक्षा मे आए तो वे दोनों अपनी बात बताने के लिए आगे आ गए। आकाश ने मुस्कुराते हुए कहा, ''सर, आप सही कहते थे कि आज के विज्ञान के युग में अंधविश्वासों के लिए कोई भी स्थान नहीं है और हमने जांच करके इस चीज को सही साबित कर दिया है। खेत में जो झांझरों की आवाज की बात लोग कर

रहे हैं, असल में वह झूठ है। वहां एक प्रवासी मजदूर रहता है और एक दिन खेत मालिक के बच्चे अपने कुछ छण -छण की आवाज़ करने वाले खिलौने वहां भूल गए और उस मजदूर ने वह खिलौने एक वृक्ष की टहनी पर टांग दिए और जब भी हवा चलती है वो खिलौने भी वृक्ष हिलने पर हिलते हैं और उनकी आवाज झांझरों जैसी आती है, जिसको लोग भूत की झांझरों का नाम दे रहे हैं।'' इस रहस्य का भेद जानकर सभी बच्चे बहुत खुश हुए, उन्होंने तालियां बजाई और अध्यापक ने दिनेश और आकाश को इस रहस्य का पर्दाफाश करने पर शाबाश दी।

चार्ल्स डार्विन और उनकी पत्नी एमिली डार्विन

एक ओर प्रेरणादायक और सच्ची कहानी चार्ल्स डार्विन और उनकी पत्नी एमिली डार्विन की है। यह कहानी विज्ञान के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक योगदान के साथ-साथ एक जोड़े के जीवन में गहरे रिश्ते की भी कहानी है।

चार्ल्स डार्विन को सभी जानते हैं क्योंकि उन्होंने ''प्राकृतिक चयन'' के सिद्धांत की खोज की, जो आज के समय में जीवविज्ञान के सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है। उनका काम जीवन के विकास और जैविक विविधता को समझने के तरीके को पूरी तरह से बदल चुका है। लेकिन उनकी सफलता के पीछे एक बहुत ही महत्वपूर्ण व्यक्ति थे, उनकी पत्नी एमिली डार्विन





चार्ल्स डार्विन के जीवन का एक कठिन समय था जब उन्होंने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक "On the Origin of Species" पर काम करना शुरू किया था। यह समय उनके लिए मानसिक रूप से बहुत कठिन था, क्योंकि वह कई बीमारियों से भी जूझ रहे थे और सामाजिक और धार्मिक आलोचनाओं का सामना कर रहे थे। ऐसे समय में, एम्मा ने उनका भरपूर समर्थन किया। उन्होंने चार्ल्स को अपने शोध में निरंतर प्रेरित किया, और अपने परिवार की देखभाल करते हुए उनके कार्यों के लिए समय निकाला।

चार्ल्स डार्विन के लिए एम्मा का समर्थन सिर्फ मानसिक नहीं था, बल्कि उन्होंने व्यक्तिगत रूप से भी कई बार चार्ल्स के वैज्ञानिक काम को समझने की कोशिश की। उदाहरण के लिए, जब डार्विन को प्राकृतिक चयन के सिद्धांत पर अपना काम पूरा करने में कठिनाई हो रही थी, तो एम्मा ने उनके साथ चर्चा की और उन्हें यह महसूस कराया कि उनके विचारों में काफी सच्चाई है। एम्मा ने अक्सर चार्ल्स को हिम्मत दी और उनकी अनुसंधान प्रक्रियाओं के बारे में खुद से भी सीखा।

हालांकि एम्मा के विचार धार्मिक थे और वह कभी भी पूरी तरह से डार्विन के सिद्धांत से सहमत नहीं थीं, लेकिन उन्होंने हमेशा उन्हें समर्थन दिया। एम्मा की धार्मिक मान्यताएँ उनके विचारों में एक निश्चित सीमा रखती थीं, लेकिन वह अपने पति के काम के प्रति गहरा सम्मान और प्रेम रखती थीं।

चार्ल्स डार्विन ने अपनी पत्नी को अपनी सफलता का एक अहम हिस्सा माना। उन्होंने कई बार अपने पत्रों में यह कहा कि अगर एम्मा का समर्थन और धैर्य न होता, तो वह अपने काम में इतने गहरे और व्यापक तरीके से नहीं डूब सकते थे। वे जानते थे कि एम्मा ने उनके शोध में उनकी सबसे बड़ी साथी और सहायक का काम किया है।

यह कहानी यह दिखाती है कि वैज्ञानिक सफलताओं के पीछे केवल अनुसंधान और प्रयोग नहीं होते, बल्कि उनके जीवनसाथी का भी अहम योगदान होता है। जब कोई वैज्ञानिक कठिन दौर से गुजरता है, तो जीवनसाथी की मानसिक और भावनात्मक सहायक भूमिका उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। चार्ल्स और एम्मा डार्विन का रिश्ता यह साबित करता है कि विज्ञान में केवल व्यक्तिगत कार्यों से ज्यादा सहयोग, प्रेम और समर्थन की भूमिका होती है।

यह सच्ची कहानी न केवल एक महान वैज्ञानिक के जीवन को उजागर करती है, बल्कि यह भी बताती है कि एक सशक्त और सहयोगात्मक रिश्ते का जीवन और कार्य पर गहरा प्रभाव हो सकता है।

बडोग सुरंग भुतहा नहीं

– डॉ. दिनेश मिश्र

अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के अध्यक्ष डॉ. दिनेश मश्र ने कहा हिमाचल प्रदेश की कालका शिमला रेल मार्ग के बड़ोग की (barog) सुरंग भुतहा नहीं है, भूत प्रेत जैसी मान्यताओं का कोई अस्तित्व नहीं होता। कर्नल बड़ोग के नाम पर बनी इस सुरंग (टनल) के भुतहा होने सम्बन्ध में कुछ स्थानीय लोगों व मीडिया के द्वारा फैलाई गई अफवाह तर्कहीन है.जबकि यह स्टेशन विश्व हेरिटेज यूनेस्को वर्ल्ड हेरिटेज साइट की लिस्ट में है फिर भी समय समय पर इसके सम्बन्ध में अन्धविश्वास, भ्रम फैलाया जाता रहा है.जबकि उन्होंने अपने दल के साथ बड़ोग जाकर सच्चाई जानी।

डॉ. दिनेश मिश्र ने कहा जानकारी के अनुसार

20वीं सदी की शुरुआत में कालका शिमला रेलवे के निर्माण के दौरान सोलन के नजदीक बसाया गया एक छोटा सी बस्ती है। जिसका नाम एक इंजीनियर कर्नल बड़ोग के नाम पर रखा गया है, जिसने 1903 में उस क्षेत्र में रेलवे लाइन के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। कर्नल बड़ोग एक ब्रिटिश रेलवे इंजीनियर थे, जो पहाड़ों में रेलवे के लिए सुरंग बनाने का काम करते थे। बरोग से पहाड़ में सुरंग बनाने के नापजोख में कुछ त्रुटि हो गई जिससे वजह से दोनो तरफ से बनने वाली सुरंग कभी मिल ही नहीं पाई, जिस से तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा उन पर कार्यवाही करते हुए एक रुपये का जुर्माना लगाया गया था। बड़ोग से यह अपमान सहन नहीं हुआ और उसी स्थान पर बड़ोग ने आत्महत्या कर ली। बाद में उन्हें एक अधूरी सुरंग के पास दफना दिया गया। इस स्थान को बाद में बड़ोग के नाम से जाना गया यह सुरंग मार्ग की सबसे लंबी सुरंग है।

डॉ दिनेश मिश्र ने कहा कभी-कभी सिर्फ रोमांचक स्टोरी बनाने के फेर में मीडिया भी अंधविश्वास फैलाने का एक माध्यम बन जाता है जब मैंने इस सुरंग के बारे में जानकारी प्राप्त की, तब मुझे देश के बड़े-बड़े समाचार पत्रों में इस सुरंग के बारे में सिर्फ एक तरफा स्टोरी ही सुनाई व दिखाई दी यहां तक नवभारत टाइम्स अमर उजाला प्रभात किरण भास्कर और कुछ चर्चित चर्चित टी वी चैनलों तथा कुछ वेबसाइट में सिर्फ एक तरफ तरफा खबरें ही दिखाई और सुनाई पड़ी, कि इस सुरंग में कर्नल बड़ोग का भूत रहता है, वहां लोग आने से डरते हैं, शाम को कर्नल बड़ोग की चीखें सुनाई पड़ती है, रात में रहस्यमयी वातावरण हो जाता है आदि आदि। इस प्रकार की अफवाहें फैलती गईं, कि बड़ोग स्टेशन को भुतहा (हॉन्टेड) स्टेशन के नाम से दुष्प्रचारित कर दिया गया, जबकि यह स्टेशन पहाड़ियों व जंगलों के बीच अपनी प्राकृतिक छटा के कारण यूनेस्को वर्ल्ड हेरिटेज साइट में शामिल है

डॉ दिनेश मिश्र ने कहा बड़ोग के संबंध में इस प्रकार की जानकारी होने के बाद हमने तय किया कि अपने साथियों के साथ वहां जा कर, परीक्षण कर कर्नल बड़ोग स्टेशन के संबंध में और इस स्टेशन के बारे में फैलाई जा रही अफवाहों के बारे में कुछ सही बातें और तार्किक की बातें लोगों को बताई जाए।

पिछले दिनों जब मेरा हिमाचल जाना हुआ ,तब दिल्ली से चंडीगढ़ होते हुए हम कसौली पहुंचे, और फिर वहां से दूसरे दिन सालोन नामक स्थान पर पहुंचे जिसके जुड़ा हुआ ही बड़ौद स्टेशन है, स्टेशन से नीचे उतरने के लिए काफी कच्चा रास्ता है, काफी ढलान है, सकरी पगडंडी है, लेकिन आसपास के दृश्य अत्यंत सुंदर और प्राकृतिक हैं, चीड़ और देवदार के पेड़ों से भरे इस क्षेत्र में मेरे साथ में डॉ. सुभाष अग्रवाल डॉ अतुल तिवारी डॉ. मोनिका अग्रवाल, शताक्षी तिवारी और सुजाता हम छह लोगों का दल इस मुहिम में शामिल हुआ. हम सावधानीपूर्वक धीरे धीरे नीचे उतरते चले गए, बड़ोग स्टेशन मुख्य सड़क से करीब डेढ़ किलोमीटर नीचे है, जहां से स्टेशन के प्लेटफार्म पर पहुंचे। सबेरे 11 बजे भी प्लेटफार्म पर न ही कोई यात्री था और न ही कोई कर्मचारी और न कोई वेंडर। जब कि जब भी द्धद्ध स्टेशन के प्लेटफार्म पर जाते हैं, यात्रियों की चहल पहल देखते हैं , वेंडरों की आवाजें सुनते है, कर्मचारियों की आवाजाही देखते हैं। प्लेटफार्म नंबर 1 पर कुछ दूरी पर एक बच्ची खेल रही थी उसने पूछने पर अपना नाम दीपिका बताया। उससे ही पूछा हमने उसने हमें वहां की कैंटीन का रास्ता बताया और स्टेशन मास्टर के ऑफिस के दिखाया। लंबा साफ सुथरा सुंदर प्लेटफार्म है जहां यूनेस्को द्वारा वर्ल्ड हेरिटेज साइट का शिलालेख निर्मित है। जहां से

चलते हुए हम लोग स्टेशन मास्टर के ऑफिस तक पहुंचे, उसके नजदीक सुरंग को भी देखा जो दूर से ही दिखाई दे रही थी, वहां लिखा हुआ है 33 नंबर इसके बारे में मीडिया के काफी हिस्से ने रहस्यमई सुरंग, भुतहा सुरंग कर्नल बड़ोग के भूत वाली सुरंग के नाम से प्रचारित किया है, सुरंग के द्वार पर ही बड़ोग सुरंग के सम्बन्ध में जानकारी अंकित है. यह पुरानी वास्तुकला से निर्मित है सुरंग, जिसमें से पटरिया गुजराती दिखती है, अंदर लाइटें भी लगी हैं, इसे सबसे लंबी सुरंग माना जाता है उसका सिग्नल भी वहीं है सुरंग के मुहाने व सुरंग के अंदर भी दूरी तक जाकर के हमने देखा, हमें कोई भी भय, डर की बात नहीं लगी। फिर बड़ोग के स्टेशन मास्टर कुलदीप भाया से मिले, जो पिछले 8 वर्षों से उसे स्टेशन पर स्टेशन मास्टर के रूप में कार्य कर रहे हैं, उनसे बात की,उनसे चर्चा की, उन्होंने अपने इतने लंबे कार्यकाल के दौरान किसी भूत को, भुतहा चीख की आवाज नहीं सुनी, उनसे काफी देर तक अनुभव सुने, उनके साथ फोटो भी खिंचवाई, सुरंग में फोटो खींची, सुरंग के बाहर फोटो खींची, दीपिका जो बच्ची वहां प्लेटफार्म पर खेल रही थी, उस बच्ची के साथ हम प्लेटफार्म से कुछ ऊंचाई पर बने कैंटीन पर गए, वहां मैनेजर, कर्मचारी से भी बातचीत हुई, जो नियमित रूप से वहां ड्यूटी करते हैं, कैंटीन में काम करने वाले कर्मचारी बड़ोग के समीप गांव से वहां पर काम करने आते हैं उन्होंने भी कोई चीचीख नहीं सुनी, उन्हें कभी नहीं लगा कोई वहां पर भूत, आत्मा रहती है।

हमने उसे कैंटीन में बने ताजा कटलेट कभी आनंद लिया और चाय भी पी।

प्लेटफार्म के नजदीक वहीं एक और पुरानी सुरंग है जिसे बंद कर दिया गया वहां तक भी पहुंचे करनाल बड़ोग कथित कब्र भी देखी,।

क्योंकि बड़ोग रेलवे स्टेशन था, कथित तौर पर भूतों का भी मामला था, डरने की भी कहानी भी चर्चा में थी, इसलिए हमने वहां पर अपने साथियों के साथ प्रतीकात्मक इंसानी रेल भी चलाई।

डॉ . मिश्र ने बताया स्टेशन मास्टर ने जानकारी दी,कि वहां पर शिमला जाने वाली ट्रेन जब आती है, तब कुछ लोग उतरते हैं क्योंकि वह शिमला जाती है वह पटरी कालका शिमला रूट है इसलिए स्टेशन पर उतरने वालों की संख्या बहुत ही कम होती है लेकिन उन्होंने अपनी ड्यूटी के दौरान कभी भी किसी भी भूत प्रेत असामान्य बातों के न दर्शन हुए उन्होंने कभी ऐसा महसूस हुआ।

बड़ोग स्टेशन के पास ही गांव में बच्चों का स्कूल है, जहां आसपास के गांव से बच्चे पढ़ने आते हैं, वहां पर वैक्सीनेशन के लिए जाती हुई एक मितानिन से भी बातचीत हुई, जो बच्चों के लिए वैक्सीन लेकर जा रही थी उससे भी चर्चा की उसने बताया नजदीक के गांव से आना जाना करती है लेकिन उसे भी कभी वहां पर कोई भूत प्रेत नहीं दिखे और न डर लगा।

डॉ. दिनेश मिश्र ने कहा, भूत प्रेत जैसी मान्यताओं का कोई अस्तित्व नहीं है, यह बात सही है कि उस सुरंग के निर्माण में कुछ चूके हुई होगी जिसके कारण इंजीनियर कर्नल बड़ोग को आत्महत्या करने पड़ी, और यह भी सही कि उनको वहां पर दफना दिया गया, उस स्टेशन का नाम भी बड़ोग के नाम पर रख दिया गया है, स्टेशन में उनके संबंध में जानकारी भी वहां लिखी हुई है,

लेकिन इस बात में कोई सच्चाई नहीं है कि स्टेशन बड़ोग में उनका भूत है, जिसकी चीखने चिल्लाने की आवाज रात में आती है, वह लोगों को तंग करता है, लोगों को नहीं वहां जाना चाहिए इत्यादि इत्यादि।

भूत वाली बात पूरी तरह से काल्पनिक, अफवाहें हैं। आम लोगों को ऐसे अंधविश्वासों पर भरोसा नहीं करना चाहिए साथ में मीडिया को भी इस प्रकार की स्टोरी जो सिर्फ लोगों में अफवाह और अंधविश्वास फैलती है ऐसी स्टोरी प्रसारित करने से भी बचना चाहिए।

जिस बड़ोग स्टेशन का नाम यूनेस्को के वर्ल्ड हेरिटेज में शामिल है, ऐसे प्राकृतिक सुंदरता वाले स्थान को आम पर्यटकों को देखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि पर्यटन बढ़े।

कालका शिमला मार्ग पर सौ से अधिक सुरंग हैं ,इसके आसपास दर्शनीय स्थल भी हैं,

यदि अफवाहों के आधार पर यदि दर्शनीय स्थलों को इस प्रकार से दुष्प्रचारित किया जाएगा तो लोग हमारे प्राकृतिक स्थलों को देखने क्यों आएंगे।

डॉ दिनेश मिश्र ने कहा रात में ऐसे सुनसान स्थानों में आने वाली रहस्यमय आवाजों के सन्दर्भ में यही कहना है कि ऊंचे पहाड़ों व जंगलों में आने वाली हवाओं की सरसराहट, शोर अकेले व अंधेरे में रहस्यमयी जरूर लग सकता है, पर उसे डरावना या भुतहा कहना उचित नहीं। वहां जिस स्थान पर हम

रात्रि में रुके थे, वहीं कमरे की खिड़कियों के कांच पूरी तरह बंद न होने से हवाओं की आवाज, सरसराहट,सीटी जैसी आवाज कमरों में गूंज रही थीं ,जो खिड़कियों के काँच पूरी तरह बंद करने पर बंद हो गईं।

डॉ .मिश्र ने कहा आज इस वैज्ञानिक युग में अंधविश्वास फैलाने की नहीं, बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने की आवश्यकता है. यदि कोई व्यक्ति, चैनल, मीडिया का कोई हिस्सा वहां पर जाकर हमारे साथ में रहना, देखना चाहता है रात में रुकना चाहता है तो हम दोबारा भी बड़ोग पर जाने और उस स्थान पर रहने उस पर चर्चा करने के लिए हमेशा तैयार रहेंगे

अध्यक्ष अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति।

98274-00859

किताब

-मुनेश त्यागी

किताब
सिखाती है हमें ज्ञान और विज्ञान,
समझाती है हमें कारण, अपनी बदहाली का,
सिखाती हैं बनाना हमें संगठन
हम सबकी मुक्ति का।

किताब
देती है गुर, नर-नारी समानता का,
पढ़ने लिखने की संस्कृति का,
लघु परिवार की जरूरत का,
बेहतर समाज बनाने का।

किताब
देती है मंत्र हमें
विकास में हिस्सेदारी का,
समाज के प्रति दायित्व का,
भाग्यवाद से छुटकारा पाने का।

किताब,
देती है हौंसला हमें,
चार दिवारी से बाहर आने का,
जगाती है इच्छा लोगों में
पढ़ने की और सीखने की।

किताब
तोड़ती है शिकंजा
पोंगा पंडितों का, जादू टोनों का,
करती है मोह भंग
तांत्रिक विज्ञान का, भूत और प्रेत का।

किताब
बदलती है सलीका
प्यार से रहने का और सहने का,
तोड़ती है शिकंजा
कुरीतियों का, अज्ञान का, अंधविश्वासों का।

किताब
करती हैं भंडाफोड़
शोषण का, लूट का, हड़पने का,
देती है मंत्र दुनिया को
संगठित होने का, नव जन सृजन का।

किताब
देती है हौंसला लड़ने का
लूट के किले गिरने का,
दिखाती है मार्ग हमें
मुक्ति का, बदलाव का।

किताब
सिखाती है सलीका हमें
बेहतर इंसान बनने का,
देती है स्वर हमें आपसी भाईचारे का
संघर्ष का, विद्रोह का, इंकलाब का।

किताब
एक दिन मैंने सुना
किताब कह रही थी,
वह घर अच्छा नहीं होता,
जिसमें अच्छी किताबें नही होतीं
और अच्छी किताबें पढ़ी नहीं जातीं,
और किताबें ही होती हैं सबसे अच्छी दोस्त।
हम तो यही कहेंगे कि बहुत जरूरी हो गया है
किताब की बातें सुनना और उन पर अमल करना
और सबसे अच्छी दोस्तों को अपने साथ साथ रखना।

थॉमस अल्वा एडिसन

- राजपाल सिंह

आज लाखों प्रकाश बल्ब हमारी रातों को रोशन कर रहे हैं। न केवल हमारे घरों में बल्कि सड़कों, पार्कों, दुकानों, कार्यालय में भी। मात्र एक उंगली से स्विच दबाने पर से हर जगह से अंधेरा दूर हो जाता है। प्रकाश बल्ब के आविष्कार से पहले आप कल्पना कर सकते हैं कि मनुष्य का जीवन कितना कठिन होगा। क्या आप जानते हैं, वह महान व्यक्ति कौन था, जिसने प्रकाश बल्ब का आविष्कार किया और मनुष्य के जीवन में रोशनी भर दी ? अगर नहीं जानते तो आज के बाद उनका नाम हमेशा याद रखना, उनका नाम था थॉमस अल्वा एडिसन।

एडिसन ने न केवल प्रकाश बल्ब का आविष्कार किया है बल्कि उनके नाम 1093 आविष्कार दर्ज हैं। उन्होंने गीत गाने वाली पहली मशीन फोनोग्राफ का भी आविष्कार किया और वो उस मशीन के भी आविष्कारक हैं, जिस से सिनेमा घरों में फिल्में चलाई जाती थी। उनके द्वारा बनाए गए तमाम वैज्ञानिक उपकरणों का जिक्र करना शुरू करें तो कई पन्ने भर जाएंगे। तो आइए उनके जीवन के बारे में संक्षेप में बात करते हैं ताकि आप महसूस कर सकें कि ऐसी उपलब्धियां आसानी से नहीं मिलती। उन्हें बहुत मेहनत करनी पड़ी और बहुत कष्ट सहने पड़े। इन वैज्ञानिकों ने अपने जीवन की सुख -सुविधाएँ त्याग दी और इतनी मेहनत की कि दूसरे लोगों को सुख-सुविधा मिल सकें।

एडिशन बचपन से ही बहुत जिज्ञासु थे। उन्होंने हर चीज के बारे में जानने की कोशिश की। इस वजह से वह घर के सदस्यों और स्कूल में शिक्षकों से लगातार सवाल पूछते रहते थे। उनकी मां उनके सभी सवालों का जवाब देने की कोशिश करती थी लेकिन शिक्षक अक्सर उन्हें नजर अंदाज कर देते थे और कई बार उनकी पिटाई भी होती थी। उन्होंने जल्दी स्कूल छोड़ दिया क्योंकि स्कूल मे उनकी जिज्ञासा शांत नहीं होती थी। घर पर उसकी मां उसे पढ़ाती थी और वह खुद हर चीज का प्रयोग करके कुछ न कुछ नया बनाने की कोशिश करते रहते थे। 9 वर्ष की आयु में उन्होंने घर पर ही एक छोटी सी प्रयोगशाला बना ली थी। वो जो भी विज्ञान की पुस्तकों में से पढ़ते व उनका प्रयोग करके देखते रहते। बच्चा होने के कारण उनके कई प्रयोग हंसी का कारण भी बनते थे जैसे कि एक बार उसने घर वालों से पूछा कि अंडे से चूजा बाहर कैसे निकलता है ? तो उसे बताया क्या कि मुर्गी अंडे पर कई दिन बैठती है। उसके शरीर की गर्मी के कारण अंडे से चूजा बाहर निकल आता है। बालक एडिशन ने इसका परीक्षण करने का निर्णय ले लिया और उसने कुछ अंडे टोकरी में रख लिए और स्वयं ऊपर बैठ गया। दूसरे दिन उसके मां-बाप ने बड़ी मुश्किल से उसको ढूंढा और समझाया कि अंडों से चूजे मुर्गी के बैठने पर ही निकलेंगे तुम उठ जाओ।

जैसे-जैसे नए प्रयोगों के प्रति उनका जुनून बढ़ता गया तो उसे पैसों की कमी महसूस होने लगी। प्रयोगों के लिए नए-नए उपकरण खरीदने और नई किताबों को खरीदने के लिए उसे पैसों की जरूरत थी और उनके परिवार के इतना पैसा नहीं दे सकता था। वह एक साहसी लड़का था। पैसा कमाने के लिए उसने अपने शहर से डेट्रायट शहर के बीच चलने वाली ट्रेन में समाचार पत्र, मूंगफली और गोलियां बेचनी शुरू कर दी। इसके साथ ही उसने गाड़ी के लगेज वाले डिब्बे के एक कोने में अपनी छोटी सी प्रयोगशाला भी बनाई। उसने देखा कि लोग अखबार पढ़ने के लिए बहुत उत्सुक हैं। लोगों की इस जरूरत को पूरा करने के लिए उसने एक छोटा सा पुराना प्रिंटिंग प्रेस खरीदा और उसे भी गाड़ी के इस लगेज वाले डिब्बे में स्थापित कर दिया। उसने स्वयं उस प्रेस पर अपना अखबार छापना और उसे बेचना शुरू कर दिया। यह अखबार चलती गाड़ी में छपने वाला दुनिया का पहला अखबार था।

सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था कि अचानक एक हादसा हो गया। गाड़ी को अचानक झटका लगा और उसकी प्रयोगशाला से फास्फोरस का एक टुकड़ा फर्श पर गिर गया। फास्फोरस हवा में आग पकड़ लेता है, इसीलिए डिब्बे में आग लग गई। वहां शोर मच गया। ट्रेन के कंडक्टर ने एडिशन को थप्पड़ों और घंसों से बुरी तरह पीटा। पिटाई के दौरान कान पर थप्पड़ लगने से वह बहरा हो गया लेकिन वो बहरेपन को वरदान मानता था क्योंकि इससे उसकी एकाग्रता भंग नहीं होती थी और वो अपने काम में लगे रहते थे।

तार-बाबू बबना :

इस घटना के पश्चात एक दिन वह स्टेशन पर अखबार बेच रहा था तभी उसने देखा कि एक बच्चा रेलवे लाइन पर खेल रहा है और उधर से ट्रेन आ रही है एडिशन ने अपने अखबार नीचे गिरा दिए और दौड़कर पटरी से बच्चे को बाहर खींचा और उसे बचा लिया। वह बच्चा स्टेशन मास्टर का था। जिसने इस अच्छे कार्य के बदले में उसे धन्यवाद दिया और टेलीग्राफ करना सिखाया। उसने तुरंत इस काम को सीख लिया और तार-बाबू की नौकरी पा ली। उस समय वह केवल 15 वर्ष के थे। यहीं से उनके आविष्कारों का काम शुरू होता है और उसका पहला आविष्कार एक ऐसा उपकरण है जो उसके काम को सुविधाजनक बनाने के लिए हर घंटे स्वचालित रूप से टेलीग्राफिक संदेश भेजता है। कुछ अन्य अविष्कार करके उसके पास बहुत सारा पैसा आ गया और उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी। नौकरी छोड़ने के बाद उसने अपनी प्रयोगशाला और कार्यशाला स्थापित की और अपना सारा समय वैज्ञानिक आविष्कार करने में लगाने लगे।

विद्युत बल्ब का आविष्कार :

उस समय तक वैज्ञानिक यह जान चुके थे कि जब कुछ पदार्थों के तारों में से बिजली प्रवाहित की जाती है तो वह गर्म हो जाते हैं और चमकने लगते हैं। इस आधार पर बिजली के बल्ब बनाने का भी प्रयास किया गया लेकिन सफल नहीं हो सके क्योंकि तार गर्म होने के बाद जल्दी ही जल जाती है। 1878 में एडिसन ने भी इस पर अपना कार्य आरंभ कर दिया। बल्ब बनाने में उन्हें भी उन्हीं कठिनाइयों का सामना करना पड़ा जो उस से पहले के विज्ञानिकों को झेलना पड़ा था। लेकिन एडिशन अपनी धुन का पक्का था। वह हताश होकर हार मानने वाला व्यक्ति नहीं था। वे दिन रात इसी में लगे रहते थे। वह सोचते थे कि बल्ब का फिलामेंट किस पदार्थ का बनाया जाए जिससे बल्ब लगातार जलता रह अगले डेढ़ साल में उन्होंने हजारों फिलामेंट बनाए और स्थापित किए और अंतत अक्टूबर 1879 में वह एक सतत प्रकाश बल्ब बनाने में सफल रहे।

एडिसन के आविष्कारों ने दुनिया को हमेशा के लिए बदल दिया। लेकिन इसके लिए वह जीवन के अंतिम क्षण तक मेहनत करते रहे। लोग उनसे कहते थे कि वह बहुत प्रतिभाशाली हैं तो उनका जवाब होता था कि प्रतिभा केवल 1 प्रतिशत होती है और बाकी 99 प्रतिशत में कड़ी मेहनत की भूमिका होती है। जब उनकी मृत्यु हुई तो उनके सम्मान में पूरे अमेरिका में एक मिनट के लिए बिजली के बल्ब बंद कर दिए गए। एडिसन जैसे कर्मठ वैज्ञानिक को दुनिया हमेशा याद रखेगी।

मई-जून की कुछ महत्वपूर्ण तिथियाँ

1 मई –	अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर दिवस: 8 घण्टे काम के दिन की माँग को लेकर 1886 में शिकागो में शहीद हुए मजदूरों की याद में इस दिन दुनिया भर के श्रमिक अपने हक के लिए लड़ने का संकल्प लेते हैं।
5 मई (1818)–	कम्युनिस्ट विचारधारा के संस्थापक महान चिन्तक और क्रान्तिकारी कार्ल मार्क्स का जन्म दिवस
5 मई (1911)	वाडेकर का जन्मदिवस चटगाँव विद्रोह की नायिका-प्रीतिलता
7 मई (1861)	रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्मदिवस
10 मई –	अंग्रेज हुक्मरानों के खिलाफ, 1857 में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की शुरूआत ।
18 मई (1872)	रसेल का जन्मदिवस महान गणितज्ञ और चिन्तक बट्रेण्ड
19 मई (1890)	वियतनाम के महान क्रान्तिकारी नेता हो चि मिन्ह का जन्म दिवस
24 मई (1899)	महान बंगला कवि काजी नजरुल इस्लाम का जन्म दिवस
28 मई (1929)	भगत सिंह के वरिष्ठ साथी, हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के नेता भगवतीचरण वोहरा बम का परीक्षण करते समय शहीद हो गये
11 जून (1857)	महान् देशभक्त क्रान्तिकारी, काकोरी केस के शहीद रामप्रसाद बिस्मिल का जन्म दिवस

केस रिपोर्ट

''धोखे और निराशा भरी जिंदगी की कैद से बाहर निकाला''

एक बाईस वर्षीय लड़की, जो बारहवीं पास करने के बाद एशिया के किसी देश में चली गई थी, वहाँ उसकी नजदीकी एक पंजाबी युवक से हो गई। घर वाले उसे खर्चा भेजते, उन पैसों में से पैसे भी उस लड़के को देने लगी। अब वो लड़का वापिस इंडिया आ गया लेकिन पैसों की मांग लड़की से फिर भी लगातार करता रहा, और वह लड़की मांग पूरी करती रही।

खैर लड़की ने इस बात को अपने घरवालों से भी साझा किया। जब घरवालों ने उस लड़के की जानकारी ली तो पता चला कि वह पहले से ही शादीशुदा है।

इस सच्चाई का पता चलने पर लड़की गहरे सदमे में चली गई। उसने काम पर जाना छोड़ दिया। वहां उसकी स्थिति पागलों जैसी हो गई, उस लड़की के परिचित उसे डाक्टर के पास लेजाते उसकी आर्थिक सहायता करते परन्तु वह लड़की ज्यादा गुम सुम रहने लगी। इस स्थिति को जानकर घरवाले चिंतित हो गए और जल्दी ही टिकट का प्रबंध करके उसे वापस अपने देश ले आए।

अब वह घर में चुपचाप रहने लगी। सारी रात छत की ओर टकटकी लगाए देखती रहती, नींद नहीं आती। सारा दिन बिस्तर पर उदास पड़ी रहती।

परिवार ने हालात को देखते हुए और यह जानकर कि लड़की अब भी बाहर के देश ही जाना चाहती है, घर वालों ने यूरोप में रहने वाले एक युवक से उसका रिश्ता तय कर दिया।

लेकिन लड़की फिर भी खुश नहीं थी। उसकी ताई, जो 20 वर्ष पहले तर्कशील मशविरा केंद्र, कालांवाली से ठीक होकर गई थी, वह अब दोबारा तर्कशीलों के पास पहुंची और यह सारी कहानी साझा की।

लड़की अब तर्कशील केंद्र में बैठी थी–जैसा कि पहले बताया गया था, उसका भोला भाला मासूम चेहरा, टकटकी लगाए डरी-डरी, सहमी आँखें, ऐनक लगी हुई, छोटी उम्र की एक भावुक लड़की।

उसे स्पष्ट शब्दों में बताया गया कि मैं तुम्हारे साथ काउंसलिंग कर रहा हूँ। तुम गहरे सदमे में हो, और मैंने आपको उससे बाहर निकालना है।

''बेटी, तुम मेरी अपनी प्यारी बेटी हो। बेझिझक होकर अपनी सारी समस्याएं मेरे सामने रखो।''

इतना कहना था कि उसकी आँखों से आँसू टपकने लगे। उसके साथ बैठी M.Tech पास ताऊ की बेटी की ओर वह बार-बार देख रही थी। मैंने उसकी स्थिति को समझते हुए ताऊ की बेटी को बाहर जाने को कह दिया।

अब वह और भी भावुक हो चुकी थी। उसके होंठ काँप रहे थे, शब्द स्पष्ट सुनाई नहीं दे रहे थे।

वह बार-बार कह रही थी, ''मेरे साथ धोखा हो गया, मेरा मन टूट गया, अब मेरा क्या होगा?''

पूछने पर उसने स्वीकार किया कि उसके मन में आत्महत्या के विचार आते हैं। वह 'हाँ' कहकर फिर रोने लगी।

थोड़ी देर बाद, उसने खुद को थोड़ा संभाला। अब वह शांत और गंभीर होकर बात सुनने को तैयार थी।

उससे पूछा गया: ''क्या तुम फिर उसी देश वापस जाना चाहती हो?''

उत्तर था: ''नहीं।''

फिर पूछा गया: ''क्या तुम्हें जो रिश्ता अब तय किया गया है, वो मंजूर है?''

उत्तर 'हाँ' में था, तो उसे अच्छे सुझाव दिए गए–

''आत्महत्या करने वाले जिंदादिल नहीं, बुज़दिल होते हैं। जो चुनौतियाँ मिली हैं, उन्हें स्वीकार कर संघर्ष से जीत हासिल करो। जिंदगी में आगे बढ़ने का तुम्हें फिर मौका मिला है, इसका पूरा लाभ उठाओ।''

हौसले से भरी बातों के बाद अब वह सहज हो चुकी थी। चेहरे पर साफ़ खुशी नजर आ रही थी।

उसने वादा किया: ''हाँ, अब मैं फिर से अपने पैरों पर खड़ी होऊँगी।''

उसके ताऊ की बेटी को अंदर बुलाया गया। उनकी दिनचर्या पूछी गई और उसमें बदलाव के सुझाव दिए गए। साथ ही आशावादी नजरिया अपनाने के लिए प्रेरित किया गया और मनोविज्ञान की कुछ बुनियादी जानकारी दी गई। मनोविज्ञान के चेतन अवचेतन और अर्धचेतन की अवस्थाओं के बारे में संकल्प क्लियर किए गए।

इसी तरह, धोखे और निराशा,घोर अंधेरे में घिरी लड़की को तर्कशील केंद्र ने आशा, खुशी और रोशनी की ओर मोड़कर एक अनमोल मानव जीवन को बचाने में अहम भूमिका निभाई।

– अजायब जलालाना

9416724331

बालक और वैज्ञानिक बाल कथाएँ

वैज्ञानिक साहित्य को बाल साहित्य में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। वर्तमान युग विज्ञान का युग है। बच्चें देश का भविष्य हैं। विज्ञान कथाएं और विज्ञान साहित्य बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित कर उन्हें बदलती हुई परिस्थितियों से समायोजन में मदद करता हैं और उनके व्यक्तित्व का विकास करता है । विजय गर्ग कहते हैं कि ''बाल साहित्य में विज्ञान साहित्य को शामिल करना कितना उचित'' विज्ञान साहित्य कौन- कौन सी विधाओं में लिखा जा रहा है ''विज्ञान साहित्य को अलग-अलग विधाओं में लिखा जा सकता है।

छोटे रोचक विज्ञान लेख, यात्रा वृतांत, वैज्ञानिकों के संस्मरण, विज्ञान कविता और विज्ञान कथा।'' क्या विज्ञान साहित्य विज्ञान के सिद्धांतों को समझने में मद्दगार हो सकता है के प्रश्न पर गर्ग जी का कहना था ''यह अच्छा प्रश्न किया, इसमें कोई संदेह नहीं है। कई बार विज्ञान के सिद्धांत कठिन और नीरस लगते हैं। कक्षा में समझ नहीं आते, लेकिन जब हम इन्हें विज्ञान कथा के माध्यम से समझाते हैं तो इन्हें समझना आसान हो जाता है। विज्ञान साहित्य को पढ़ने से वैज्ञानिक शब्दावली का ज्ञान भी आसानी से होने मदद मिलती है।'' ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी कई अंधविश्वास और भ्रांतियों व्याप्त हैं। क्या विज्ञान साहित्य इन्हें दूर करने में सहायक होता है के प्रश्न पर उन्होंने बताया, ''विज्ञान साहित्य को पढ़ने से वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। बालक समस्या को पहचान कर उसका मूल कारण खोजता है। अपनी बात को सत्यापित करने के लिए तथ्यों का सहारा लेता है। बालक में अन्वेषण प्रवृत्ति और तर्क शक्ति का विकास होता है।'' विज्ञान साहित्य में विज्ञान कथाएँ बच्चों को बहुत लुभाती हैं।

बालक के विकास में विज्ञान कथा का क्या योगदान हो सकता है के उत्तर में कहती हैं, ''विज्ञान कथाएँ बालक की कल्पनाशीलता को नये आयाम दे सकती हैं। ये शिक्षा प्रक्रिया को रोचक बनाती हैं। विज्ञान कथाएं पढ़ने से बालक की विचार प्रक्रिया सुदृढ़ होगी और दूर दृष्टि का विकास भी होगा।'' विज्ञान कथा के बारे में कुछ और बताएं पूछने पर वे कहते हैं कि विज्ञान कथा भी एक साहित्यिक शैली है जिसमें विज्ञान के तथ्यों पर आधारित कहानियाँ शामिल होती हैं, जो अक्सर भविष्य का परिदृश्य प्रस्तुत करती हैं। इनके द्वारा ब्रह्मांड और दुनिया के अस्तित्व को समझा जा सकता है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, विज्ञान कथाओं में संभावित वैज्ञानिक सफलताओं और मानव ज्ञान का विकास शामिल होता है। विज्ञान कथाएँ कभी भी दैवीय हस्तक्षेप या अन्य ऐसी ही धारणाओं का खुले तौर पर धार्मिक विषयों से संबंधित नहीं होती हैं। बाल विज्ञान कथाएं कैसी होनी चाहिएं प्रश्न के जवाब में कहते है कि बाल विज्ञान कथाएं, रोचक शैली में लिखी काल्पनिक कहानियां होती हैं. इनमें सेटिंग और कथानक प्रौद्योगिकी, समय यात्रा, बाहरी अंतरिक्ष या वैज्ञानिक सिद्धांतों के इर्द-गिर्द रहते हैं। पहले पुस्तकें और लघु कथाएँ विज्ञान कथा कहानियों को व्यक्त करने के मूल साधन थे। आज उन्नत तकनीकी और विशेष प्रभावों के बल पर टेलीविजन और सिनेमा 21वीं सदी में विज्ञान कथाओं के लिए प्रमुख माध्यम बन गए हैं।

बच्चे आज स्क्रीन पर विज्ञान कथा देख कर रोमांचित होते हैं। विज्ञान कथा साहित्य मनोरंजन प्रदान करने के अलावा वर्तमान समाज की आलोचना भी करता है और विकल्पों की खोज कर सकता है। यह ''आश्चर्य की भावना'' को प्रेरित कर सकता है। बाल विज्ञान कथा के कथानक भी बच्चों को आकर्षित करने वाले होने चाहिए इस पर आपकी क्या राय है पूछने पर बताते हैं कि विज्ञान कथा साहित्य में कथानकों की एक विस्तृत शृंखला विद्यमान है। अंतरिक्ष, साहसिक यात्राएं, विविध वैज्ञानिक सिद्धांत, भविष्य में वैज्ञानिक आविष्कारों की कल्पना, जैव तकनीकी के अनुप्रयोग, पर्यावरण आदि बाल कथाओं के प्रमुख विषय है। रोबोट, कृत्रिम मनुष्य, मानव क्लोन, बुद्धिमान कंप्यूटर और मानव समाज के साथ उनके संभावित संघर्ष सभी विज्ञान कथाओं के प्रमुख विषय रहे हैं। विज्ञान कथा को कल्पना कथा भी कहा जाता है, क्या वास्तव में यह चमत्कारों की बात करती है प्रश्न के उत्तर में वे कहते हैं कि साहित्य में विज्ञान कथा समय के प्रति संवेदनशील विषय है। आम तौर पर भविष्यवादी, विज्ञान कथाएँ तकनीकी परिवर्तन द्वारा संभव बनाए गए जीवन के वैकल्पिक तरीकों के बारे में अनुमान लगाती हैं, और इसलिए कभी-कभी इसे ''कल्पना कथा'' कहा जाता है। विज्ञान कथा का एक बड़ा लाभ यह है कि यह पाठक के लिए अज्ञात या अप्राप्य ज्ञान के छोटे-छोटे अंश, संकेत और वाक्यांशों को व्यक्त कर सकता है: चमत्कार

जो इसमें घटित हो रहे हैं, वे अक्सर भविष्य में सत्य बन जाते हैं।

पूर्व में लिखी गई अनेक विज्ञान कथाओं में वर्णित तथ्य आज सत्य साबित हो चुके हैं। असीमोव ने 50 के दशक में बुद्धिमान रोबोट्स की कहानियां लिखी हैं। रे ब्रैडबरी की विज्ञान कथा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता युक्त वस्तुएं आज सत्य हैं। विज्ञान कथा का आकर्षण तर्कसंगत, विश्वसनीय और चमत्कारी के संयोजन में निहित है। विज्ञान कथा साहित्य से बालक को अन्य क्या लाभ हो सकते हैं पूछने पर वे बताती हैं कि विज्ञान कथाओं में भविष्य के संसार से बच्चों का परिचय होता है। भविष्य में पर्यावरण कैसा होगा, तकनीकी कितनी उन्नत हो जाएगी और इस परिप्रेक्ष्य में समाज का स्वरूप क्या होगा। कौनसी चुनौतियों हमारे सामने आ सकती है, विज्ञान कथाएँ यही बताते है। आप विज्ञान कथा, कविता और अन्य प्रकार लेखन करते हैं बताएं विज्ञान साहित्य कैसा होन चाहिए, इस पर वह कहती विज्ञान साहित्य सरस और रोचक भाषा होना चाहिए। कहानी या लेख बहुत बड़े न हों, साथ में आकर्षक चित्र भी हों। विज्ञान कथा का आधार कोरी कल्पना या फैंटेसी न हो, वैज्ञानिक तथ्य हों। अंतिम प्रश्न विज्ञान साहित्य पर आपका अनुभव कैसा है क्या इसे साहित्य जगत में साहित्य की श्रेणी में रखते हैं ।

आपने बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न किया, वैसे तो विज्ञान साहित्य, आम साहित्य जैसा है परंतु विडंबना है कि साहित्य जगत में इसे साहित्य से पृथक कर ही देखने की प्रवृति अधिक है। जब की विज्ञान साहित्य लेखन को बढ़ावा देने के लिए कई विज्ञान पत्रिकाएं भी प्रकाशित होती हैं। विज्ञान साहित्य लेखक होने के नाते चाहूंगा कि आमजन में भी इसे अलग न देख कर साहित्य का ही महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाए। समाचार पत्र भी विज्ञान संबंधी बहुत उपयोगी जानकारी बच्चों को निरंतर देते हैं, वे विज्ञान कथा, कविता और लेखों को भी अपने प्रकाशनों में स्थान देंगे तो और प्रोत्साहन मिलेगा। मेरा लेखन का अनुभव अच्छा है, विज्ञान पत्रिकाएं कई बार आग्रह कर विषय विशेष पर रचनाएं मंगवाते हैं। अंत में पुनः कहना चाहूंगा कि विज्ञान साहित्य को समुचित सम्मान की दृष्टि से देखा जाए, प्रोत्साहन मिले और बच्चें विज्ञान साहित्य पढ़ने के लिए प्रेरित हों।

विजय गर्ग सेवानिवृत्त प्रिंसिपल मलोट पंजाब

तर्कशील सोसायटी पंजाब की नई राज्य कार्यकारी समिति

1.	संगठनात्मक विभाग	राजिंदर भदौड़	98728-74620
2.	वित्त विभाग	राजेश अकलिया	98156-70725
3.	साहित्य विभाग	राम स्वर्ण लक्खेवाली	95010-06626
4.	संस्कृति विभाग	जोगिंदर कुल्लेवाल	98721-21958
5.	मीडिया विभाग	सुमित सिंह	76960-30173
6.	सोशल मीडिया विभाग	सुरजीत टिब्बा	99140-52555
7.	संपादक तर्कशील (पंजाबी)	राजपाल सिंह	98767-10809
8.	संपादक तर्कशील पथ (हिन्दी)	कुलजीत डांगरखेड़ा	97819-25566
9.	चित्रकारी विभाग	सुखविंदर बागपुर	94174-27538
10.	राष्ट्रीय अंतराष्ट्रीय विभाग	जसवन्त मोहाली	98555-30721
11.	मानसिक स्वास्थ्य विभाग	जुझार लोंगोवाल	94654-30016
12.	छात्र चेतना	गुरप्रीत शेहना	98150-14532
13.	साहित्य वन	मोहन बदला	94176-79306
14.	विधि विभाग	जसविंदर फगवाड़ा	94783-04560
15.	कार्यालय सचिव	हेम राज स्टेनो	98769-53561

बच्चों की जिज्ञासा का कोना

कुछ अद्भुत विज्ञान तथ्य

पृथ्वी पर अधिकांश ऑक्सीजन महासागरों द्वारा उत्पादित होती है।

नेशनल ओशनिक सर्विस के अनुसार, हम उस ताज़ी हवा के लिए पौधों पर आधारित समुद्री जीवों को धन्यवाद दे सकते हैं। दुनिया की आधी से ज़्यादा ऑक्सीजन प्लवक, समुद्री शैवाल और दूसरे प्रकाश संश्लेषकों द्वारा उत्पादित की जाती है।

वो धातु, जो हवा और पानी के संपर्क में आने पर फट जाते हैं

क्या आप जानते हैं कि, कुछ धातुएं हवा और पानी के संपर्क में आती हैं तो फट जाती हैं। दरअसल, हवा के संपर्क में आने पर ये धातुएं तुरंत ही ऑक्सीकृत हो जाती हैं क्योंकि ये धातुएं अत्यधिक क्रियाशील होती हैं। इन धातुओं में सोडियम, पोटेशियम, लिथियम, रूबिडीयाम और सीज़ियम प्रमुख हैं। उसके बाद जब इन धातुओं को पानी में डाला जाता है तो विस्फोट होता हैं। ये सभी क्षार धातुएं हैं और इनके बाहरी कक्षा में केवल एक इलेक्ट्रॉन होता है जिसके कारण वे आसानी से इस इलेक्ट्रॉन का त्याग कर अन्य धातुओं के साथ बंधन बना लेते हैं।

सोते समय हमें गंध का पता नहीं चलता

गंध पर ब्राउन विश्वविद्यालय के रिसर्चर ने 2004 में 20 से 25 वर्ष आयु वर्ग के 3 स्वस्थ पुरुषों और 3 स्वस्थ महिलाओं के ऊपर एक परीक्षण किया था। जिसमें पाया गया कि सभी लोग तेज शोर के कारण एक झटके में जाग गए, लेकिन गंध का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। जिसमें यह साबित होता है कि जब हम सो रहे होते हैं तो हमें गंध का पता नहीं चलता है।

शंका निवारण

- पृथ्वी गतिशील है फिर पता क्यों नहीं चलता ?

हमारी पृथ्वी लगातार अपनी धुरी पर घूमती रहती है। ऐसा नहीं हैं कि हमें पृथ्वी की गति का पता नहीं लगता। दिन में सूर्य की बदलती हुई स्थिति से हमें पृथ्वी की गति आभास होता है। पृथ्वी का घूमना हमें महसूस इसलिए नहीं होता क्योंकि पृथ्वी बराबर एक ही गति से घूम रही है। किसी भी वस्तु की गति का पता उसकी गति में आने वाले परिवर्तन से होता है। पृथ्वी की गति में परिवर्तन न होने के कारण ही हमें इसके बारे में पता नहीं चल पाता। साथ ही हमारा अस्तित्व भी पृथ्वी के तुलना में कण मात्रा से कम है।

- क्या काला इल्म नाम की कोई चीज होती है?

- काला इल्म जैसी कोई चीज नहीं है। दैवीय शक्तियों का भ्रम पैदा करने वाले कई पाखंडी और ऐसे ही तांत्रिक नाखून या किसी चमकदार वस्तु को देखाकर संबंधित व्यक्ति को सम्मोहित कर लेते हैं और इसे काला जादू कहते हैं। वहीं पर मनोचिकित्सक मानसिक रोगियों के इलाज के लिए इस सम्मोहन विधि का उपयोग करते हैं। सम्मोहन एक वैज्ञानिक विधि है न कि कोई काला जादू।

- गांवों में योगी मंत्र पढ़कर या नीम- हकीम कोई तिल के समान औषधि लगाकर दांतों से कीड़े निकलते हैं, क्या यह सही है या गलत ?

- दांतों की सफाई न करने पर दांतों पर भोजन के अवशेष पीले पत्थर की तरह जम जाते हैं। इससे बैक्टीरिया पैदा होते हैं लेकिन इन बैक्टीरिया को नंगी आंखों से नहीं देखा जा सकता। धोखेबाज योगी या नीम-हकीम तीली की नोक पर कीड़े का एक छोटा टुकड़ा या भोजन का भूरा टुकड़ा डालकर पीड़त वयक्ति को बड़ी चतुरता से दिखाते हैं। मार कर कीड़ा निकालना या मंत्र से मारना भोले-भाले लोगों को लूटने की एक चतुर योजना से ज्यादा कुछ भी नहीं है।

– क्या सांप की मणी लगाने से सांप का जहर उतर जाता है ?

– आज तक उपलब्ध वैज्ञानिक जानकारी के अनुसार सांप का जहर उतारने वाली कोई मणी नहीं है। यह योगियों का भोले –भाले लोगों को चालाकी से लूटने का एक साधन है। वे दावा करते हैं कि उनके पास विषहरण गुण रखने वाली मणी हैं जिस से सांप के जहर को खत्म कर सकते हैं। किंतु वे इस मणी से लोगों को लूटने का काम करते हैं। आमतौर पर अधिकांश सांप जहरीले नहीं होते या जीवन के लिए खतरा नहीं होते, इसी लिए कभी–कभी कोई व्यक्ति कम या बिना जहर वाले सांप के काटने के बावजूद बच सकता है। यदि ऐसी मणी किसी साँप कटे जीवित व्यक्ति को लगाई जाती है तो मणी की शक्ति में उसका विश्वास दृढ़ हो जाता है,जबकि साँप जहरीला न होने के कारण उसने बच तो जाना ही था। सांप के काटने पर ऐसे किसी भी अंधविश्वास में पढ़ने की बजाय तुरंत किसी योग्य डॉक्टर से प्राथमिक उपचार लेना चाहिए।

– सांप के काटने पर प्राथमिक उपचार इस प्रकार दिया जा सकता है। हाथ या पैर पर सांप काट लेने पर प्रभावित हिस्से को शरीर की तरफ से कसकर बांध दें ताकि खून में मिला हुआ जहर हृदय से होते हुए जल्दी मस्तिष्क तक न पहुंच सके। सांप के काटने पर नए ब्लेड या अन्य रोगाणुहीन तेज धार वाले उपकरण से काटें ताकि जहर शरीर मे जाने के बजाय शरीर से बाहर निकल जाए, यदि मुंह में कोई घाव या छाले न हों तो मुंह से चूसकर जहर को बाहर फेंक देना चाहिए ओर साफ पानी से कुल्ला कर लेना चाहिए। जहरीले खून को वैक्यूम क्लीनर या किसी अन्य त्वचा पंप से भी चूसा जा सकता है लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि साँप कटे अंग को इतना कसकर न बांधा जाए कि खून का पूरा दौरा न रूक जाए ओर न ही खून को इतना निकाला जाए कि संबंधित मरीज में खून की कमी की समस्या हो जाए। सांप का जहर खत्म करने की दवाई बड़े–बड़े अस्पतालों में उपलब्ध होती है,इसलिए किसी भी अंधविश्वास जैसे कि मंत्र–तंत्र, मणी आदि के चक्कर में न पड़कर मरीज का तुरंत इलाज करवाना चाहिए। प्राथमिक उपचार समय पुरी तरह सतर्क रहना चाहिए।

– लोग कहते हैं, जिस वस्तु का नाम है उसका अस्तित्व भी होता है?

– लोगों के यह कहने का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है कि जिस वस्तु का नाम होता है वह वस्तु जरूर होती है। वस्तुओं, अवधारणाओं, घटनाओं और परिघटनाओं का नामकरण भाषा विज्ञान के नियमों के अनुसार किया जाता है।बहुत सी वस्तुओं का कोई भौतिक अस्तित्व नहीं होता लेकिन उनकी मानसिक अवधारणा मौजूद होती है। जैसे भूत का शाब्दिक अर्थ है– बीता हुआ समय। किसी मृत व्यक्ति की मानसिक स्मृति ही भूत है। इस रूप में भूत एक मानसिक अवधारणा है, इसका कोई भौतिक अस्तित्व नहीं होता अत: इस संबंध में कोई अंधविश्वास नहीं होना चाहिए।

– सूर्य या चंद्र ग्रहण होने पर गर्भवती महिलाओं या जानवरों को बैठने से रोका जाता है, क्या इसका कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है?

– आज हम सूर्य ग्रहण और चंद्र ग्रहण के वैज्ञानिक कारणों को जानते हैं लेकिन जब मनुष्य इनके वैज्ञानिक कारणों से अनजान था तब कभी– कभार होने वाली यह ग्रहण लगने की घटना उसे चौंका देती थी। हर समय कुछ बच्चे शारीरिक रूप से असामान्य पैदा होते रहते हैं। ग्रहण के बाद पैदा हुए ऐसे बच्चे को बच्चों को ग्रहण के दुष्प्रभाव से जोड़ा जाता रहा है। ग्रहण के समय कोई भी ऐसी भौतिक क्रिया नहीं होती जिसका गर्भवती महिलाओं या जानवरों पर घातक प्रभाव पड़े इसलिए ऐसा कोई अंधविश्वास नहीं करना चाहिए।

चेतना का रंग

–डॉ. महिंदर सिंह रंधावा

जीवविज्ञान ने मेरी आँखें खोल दीं। इसे पढ़ने से पता चला कि जीवन की उत्पत्ति और विकास कैसे हुआ। यह विकास पौधों और जानवरों दोनों में हुआ। जब हम जीवन की शुरुआत में जाते हैं तो ये दोनों एक साथ आते हैं। पौधों में मौजूद हरा रंग, जिसे क्लोरोफिल कहा जाता है, उन्हें सूर्य के प्रकाश, पानी और कार्बन डाइऑक्साइड की ऊर्जा के संयोजन से कार्बोहाइड्रेट बनाने की शक्ति देता है। यह शक्ति पशुओं में मौजूद नहीं है और वे वनस्पति पर निर्भर हैं। जीवन सर्वप्रथम महासागरों में प्रकट हुआ और वहीं से कीटों, गुंडोयों से होता हुआ मछलियों तक पहुँचा। फिर जीवन मेंढकों से होते हुए पृथ्वी तक पहुँचा। फिर, छिपकलियों से स्तनधारियों और पक्षियों तक प्रगति करते हुए, छछूंदरों और टार्सियर्स से लेकर चलने वाले बंदरों तक, यह धीरे–धीरे दो मिलियन वर्षों की अवधि में मनुष्य में विकसित हुआ। इस ज्ञान ने मेरे दिमाग के दरवाजे खोल दिए और धर्मों के झूठ और चमत्कारों पर से मेरा विश्वास उठ गया।

लोग पैसों का क्या करते हैं?

श्याम तो जूते चाहते थे न? फिर उन्होंने 'सिक्का'' क्यों ले लिया? सिक्के का वे क्या करेंगे?

अगर हम दिमाग लगाकर सोचें, तो जो लालजी ने किया उसे देखने के बाद यह शंका नहीं होनी चाहिए। लालजी ने अपने पैसों से क्या किया? उन्होंने पैसे दिये और घड़ा खरीदा। नहीं? श्याम भी अपने पाये हुए पैसों का ऐसा ही कुछ करेंगे। क्या हम इस बात की कल्पना नहीं कर पा रहे हैं? जिस तरह लालजी ने पैसे देकर घड़ा खरीदा उसी तरह श्याम भी क्या पैसे देकर जूते नहीं खरीद सकते?

पहले तो सवाल यह है कि पैसे का सिक्का लालजी के पास क्यों था? वह उन्हें कैसे मिला? यह शंका लालजी के पास श्याम के आने से पहले उठी होती, तो यह चतुराई की बात होती। अब अगर श्याम को देख लेने के बाद भी यह सवाल उठ रहा हो, तो यह नासमझी ही कही जायेगी। यदि यह पता हो कि पैसे का सिक्का श्याम के पास कैसे आया, तो यह भी समझा जा सकता है कि लालजी के पास कैसे आया होगा। पैसे का सिक्का श्याम को कैसे मिला? अपनी वस्तु बेचने पर मिला। लालजी को भी उसी तरह मिला होगा। लालजी ने भी अपनी बनायी हुई कोई वस्तु बेची होगी और पैसे पा लिये होंगे। क्या हम इतना भी नहीं समझ सकते? हम अगर अपना दिमाग लगायें और बुनियादी बातों को पकड़े तो हम सब कुछ समझ सकते हैं।

मगर इस पैसे को देखकर हम यह तो समझ नहीं सकते कि लालजी ने किस तरह की वस्तुएँ बनायी होंगी। इसीलिए हमें मान कर चलना होगा कि लालजी ने कोई न कोई काम जरूर किया होगा। मान लें कि लालजी मक्के की खेती करते होंगे और थोड़ा-सा मक्का बेच कर चार या पाँच रुपये कमा लिये होंगे। मतलब यह कि उसी पैसे से उन्होंने एक रुपया देकर घड़ा खरीदा होगा! कोई भी व्यक्ति पैसे कैसे पा सकता है? कोई न कोई वस्तु बेचकर ही तो।

हमने यहाँ यह कहा है कि घड़े का पैसे के साथ विनिमय होने से पहले श्याम खुद अपना घड़ा लेकर लालजी के पास गये थे। लेकिन हमेशा ऐसा ही होना जरूरी नहीं। लालजी भी अपना एक रुपया लेकर श्याम के पास जा सकते हैं और घड़ा मांग सकते हैं। कौन किसके पास जाता है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मुख्य बात है घड़े और पैसे के बीच विनिमय होना।

तो ठीक है, श्याम को घड़ा बेचने पर एक रुपया मिला है। अब वे इसका क्या करेंगे? रुपये को सन्दूक में रख देंगे? अगर वे पैसे सन्दूक में रख देंगे, तो जूते कैसे मिल पायेंगे? रुपये को चार या दस दिन तक वे दूर रखे रहें, तो भी उसे कभी न कभी सन्दूक से निकालना ही पड़ेगा।

श्याम को तो तत्काल जूतों की जरूरत थी न? इसीलिए वे रुपये को अपनी कमर में खोंस फौरन सोमदास जूते बनाने वाले के पास चले जाते हैं। पूछते हैं, ''सोमदास ! मुझे एक बेहतरीन जूतों की जोड़ी चाहिए। दाम क्या है?''

''तुम नहीं जानते? नये ग्राहक की तरह क्यों पूछ रहे हो? दाम एक रुपया है, नहीं क्या?'' सोमदास ने जवाब में कहा।

''एक रुपया? यह तो मैं जानता ही था। सिर्फ इसलिए पूछा कि कहीं कोई छूट तो नहीं मिल रही है आजकल,'' श्याम बोले।

''तुम तो अजनबी की तरह मोल-भाव कर रहे हो!'' सोमदास ने मुस्कराते हुए कहा।

''ठीक है, ले लो यह पैसा,'' यह कहते हुए श्याम ने अपने कमरबन्द की तहों से रुपया निकालकर सोमदास की हथेली पर रख दिया। जूतों की एक जोड़ी उठा ली, तुरन्त पहन ली और खुश होकर चल पड़े।

श्याम जब सोमदास के पास जूते खरीदने गये, तो क्या सोमदास पैसे लेने से इन्कार कर सकते थे? क्या वे यह कहते कि अभी मुझे सोने का सिक्का नहीं चाहिए। मैं नहीं दूँगा तुम्हें जूते। मुझे नहीं चाहिए सोना।'' ऐसा वे नहीं कहते। सोमदास को मालूम है कि श्याम क्या देने वाले हैं। वह कोई सोने का मामूली टुकड़ा नहीं है। पैसा है पैसा! पैसे का सिक्का! उन्हें मालूम है कि लोग इससे क्या-क्या करते हैं। वास्तव में सोमदास ने जूतों की कई सारी जोड़ियाँ बिक्री के लिए ही बना

रखी हैं। खरीदने वाले जितने ज्यादा हों, उतना ही ज्यादा उन्हें खुशी होती है। पैसे लेते समय वे जानते हैं कि ये बाद में कितने उपयोगी हो सकते हैं। यही वजह है कि उन्हेंनि पैसे लेकर जूते दे दिये हैं।

जूतों की बहुत ज्यादा जरूरत होने पर श्याम को एक बार वस्तु–विनिमय प्रणाली के ही कारण जूते मिलने में काफी कठिनाई हुई थी। नहीं? अब उन्हें इन पैसों की प्रणाली से ऐसी कोई कठिनाई हुई? नहीं। जूते बड़े आसानी से मिल गये हैं। पहले अपनी वस्तु बेचने पर पैसे मिले। फिर उस पैसे से खरीदने पर जूते मिल गये। अपना घड़ा बेचते समय श्याम विक्रेता वे और जूते खरीदते समय खरीददार।

जिस किसी को किसी वस्तु की जरूरत हो वह पहले अपनी वस्तु बेचता है। इससे पैसे मिल जाते हैं। फिर इसी पैसे से वह अपनी जरूरत की वस्तु खरीद लेता है। इस तरह दो बार विनिमय करने पर ही अपनी जरूरत की वस्तु आसानी से मिल पाती है। वस्तु विनिमय की प्रणाली होती, तो जिस वस्तु की जरूरत हो वह तत्काल मिल भी सकती है और नहीं भी मिल सकती है। वस्तु–विनिमय और पैसों की प्रणाली के बीच यह फर्क क्यों है?

पैसों और जो पैसा न हो ऐसी साधारण वस्तुओं के बीच क्या अन्तर है ?

कोई साधारण वस्तु ले लें, जैसे घड़ा या जूतों की जोड़ी (पर पैसे का सिक्का नहीं)। उस वस्तु का कोई न कोई स्वाभाविक उपयोग–मूल्य होगा। किसी वस्तु का किसी दूसरी वस्तु के साथ विनिमय हो पाने में 'मूल्य' कोई समस्या नहीं होती। समस्या खड़ी होती है, तो उपयोग–मूत्य के कारण।

कुम्हार को जब जूतों की जरूरत थी तब जूते बनाने वाले को घड़े की जरूरत नहीं थी। घड़े का वह कौनसा गुण था जिसके कारण जूते बनाने वाले को घड़ा स्वीकार्य नहीं था? वह गुण घड़े का 'मूल्य' नहीं था। घड़े का भी उतना ही मूल्य है जितना कि जूतों का। जूते बनाने वाला अगर जूते दे देता और घड़ा ले लेता, तो अपने दिये हुए मूल्य को वह वापस पा लेता। इसीलिए समस्या 'मूल्य' की नहीं है। समस्या उस 'उपयोग–मूल्य' की ही है जो घड़े से मिलता। जूते बनाने वाले को उस वक्त इसकी जरूरत नहीं थी। अगर ऐसी वस्तुओं का एक–दूसरे से विनिमय होना हो जिनका अपना–अपना स्वाभाविक उपयोग–मूल्य हो, तो समस्या इन उपयोग–मूल्यों के कारण खड़ी होती है। इन वस्तुओं का मूल्य समान हो, तो भी उनका अपना–अपना उपयोग–मूल्य होता है। इसीलिए समस्या इस उपयोग–मूल्य से ही खड़ी होती है। विनिमय अगर वस्तुओं के बीच होना हो, तो उनका उपयोग–मूल्य ही कभी न कभी बाधा बन कर खड़ा होता है।

विनिमय बिल्कुल सहज रूप से हो सके, इसके लिए ऐसी किसी नायाब चीज की जरूरत होती है जिसका कोई उपयोग–मूल्य न हो, हो तो सिर्फ 'मूल्य' ही।

'पैसा' ही वह नायाब चीज है। देखिए, यह चीज कितनी नायाब है!

सवाल और जवाब

1. किसी को पैसे कैसे मिल पाते हैं?

जवाबः अपनी बनायी वस्तुओं को बेचें या दूसरों के लिए कोई काम करें तो पैसे मिल जाते हैं।

2. श्याम कुम्हार के बाल किसी झाड़ी की तरह बढ़ गये हैं। नाई को देने के लिए उनके पास पैसे नहीं हैं। नाई को तत्काल पैसों की जरूरत है, क्योंकि अभी उन्हें डॉक्टर को बकाया पैसे देने हैं। इसीलिए उन्होंने श्याम से कह दिया है कि अब पैसे देने पर ही बाल काटूँगा। अब श्याम क्या करेंगे?

जवाब : श्याम किसी से उधार ले सकते हैं और नाई को पैसे देकर अपने बाल कटवा सकते हैं। या वे अपने घड़े बिक जाने और पैसे हासिल कर लेने तक के लिए अपने बाल कटाना टाल सकते हैं।

पुस्तकें

''जितनी अधिक पुस्तकें आपको सोचने के लिए मजबूर करती हैं, वे आपके लिए उतनी ही अधिक सहायक होती हैं। सीखने का सबसे कठिन तरीका है आराम से पढ़ना, लेकिन एक महान विचारक की पुस्तक विचारों के जहाज की तरह होती है, जो सत्य और सौंदर्य से भरपूर होती है।''

– पाब्लो नेरुदा

नास्तिक होने की पहचान आनंद और संतुष्टि है : साधू बिन्निंग

कनाडा में रहने वाले साधू बिन्निंग की अपनी अलग पहचान है। वे प्रवासी पंजाबी लेखकों में अपना प्रमुख स्थान रखते हैं। वे एक लेखक, विद्वान, शोधकर्ता और प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता। वे अनेक पुस्तकों के लेखक हैं। साहित्य की हर विधा में उनकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। प्रगतिशील सोच को समेटे बिनिंग की पुस्तक नास्तिक बानी देश-विदेश में चर्चा का विषय बनी है। हमें शेर-ए-पंजाब रेडियो कार्यक्रम में नवजोत ढिल्लों के साथ हुए उनके साक्षात्कार के मुख्य अंश तर्कशील पाठकों के साथ सांझा करते हुए खुशी हो रही है।

- विचार प्रवाह की जागृति कहां से आई ?

मेरा पैतृक गांव बिणगा है, जो कि जालंधर छावनी के पास है। किसी कारणवश हमारा परिवार चहेड़ू में अपने रिश्तेदारों के पास रहने चला गया। मेरा बचपन यहीं बीता। प्रचलित मान्यताओं से हटकर सोचने और समझने की इच्छा बचपन से ही पनपने लगी थी। मैं अपने शिक्षक को देख कर पांचवीं कक्षा से ही प्रीतलड़ी पत्रिका का पाठक बन गया था। प्रीतलड़ी ने मेरे सोचने और जीवन को परखने के तरीके को बदलने में मौलिक भूमिका निभाई। उस समय उभरते रूसी साहित्य ने मेरे विचारों के प्रवाह को सुगम बनाया।

- आपको साहित्य पढ़ने की प्रेरणा क्या देती है ?

किसी विशेष व्यक्ति ने मुझे साहित्य पढ़ने के लिए प्रेरित नहीं किया। मेरे परिवार में कोई भी ऐसा नहीं था जो पढ़ता हो। चहेड़ू गांव में दो लोग ही पाठक थे। जिसके लिए मैं जालंधर से किताबें किराये पर लाता था। उन दो लोगों में एक मेरे ताऊ भी थे। वो मुझ से उर्दू की किताबें पढ़ने के लिए मंगवाते थे। मेरे मन में भी उर्दू सीखने की इच्छा पैदा हुई । उन्होंने मुझे उर्दू सिखाना शुरू कर दिया। एक महीने के भीतर मैंने उर्दू सीख ली और उर्दू की किताबें पढ़ने लगा। जब मैं वैंकूवर आया तब तक मैंने पंजाबी के साथ-साथ उर्दू, हिंदी और अंग्रेजी में भी कई किताबें पढ़ ली थीं। उस समय मैंने नानक सिंह, जसवंत कंवल और अमृता प्रीतम जैसे महान लेखकों द्वारा पंजाबी में लिखे गए सभी उपन्यास पढ़ लिए थे।

-कनाडा में अध्ययन करने की आपकी यात्रा कैसी रही?

मैं 1967 में वैंकूवर आया। मैंने यहां आकर एक कारखाने में काम करना शुरू कर दिया। काम से घर आने के बाद पढ़ना-लिखना असंभव था। मेरे दोस्त ने मुझे डाकघर में काम करने की सलाह दी। वह फॉर्म लेकर आया और मुझे दे दिया। मैं उस साक्षात्कार में चयनित हो गया। डाकघर में काम कारखाने की तुलना में बहुत आसान था। यहां काम करते समय, शब्दों ने दस्तक दी। मैंने जो साहित्य पढ़ा, उसने मेरे सपनों को जगाना शुरू कर दिया। पत्रों को वितरित करते- करते , मेरे विचार काव्यात्मक रूप में प्रवाहित होने लगे। जिसे मैं कागज पर लिख लेता। ऐसा करते समय कविता मुझसे संवाद करने लगी। यह सृजन एक जुनून बनने लगा।

मैंने अपनी शैक्षणिक योग्यता के लिए अध्ययन शुरू कर दिया। मैं पंजाब में हायर सेकेंडरी में फेल हो गया था। इस बात का गम मेरे दिमाग में छाया हुया था मेरे सहपाठियों के पीछे लग कर मैने विज्ञान विषय चुना था और मैं विज्ञान में फेल हो गया। मेरे मन के किसी कोने में खुद को साबित करने की इच्छा थी। इसलिए मैंने कनाडा आ के काम के साथ -साथ अध्ययन भी जारी रखा। बीस वर्ष की उम्र में रात्रि कक्षाओं में अध्ययन शुरू किया। मैने पुरी लगन से आठवीं कक्षा से लेकर बी.ए. 1983 तक की पढ़ाई पूरी की।

- लेखन प्रक्रिया में आपका मार्गदर्शन किसने किया ?

सबसे पहले मेरी मुलाकात पंजाबी कवि गुरुचरण रामपुरी से हुई। फिर 1970 में जब सुरिंदर धंजल कनाडा आये तो मैं उनके संपर्क में आया। मैंने उन्हें अपनी कविताएँ दिखाईं। मेरे लेखन कौशल में ओर सुधार हुआ। मेरी पहली कविता नागमणि में प्रकाशित हुई थी। यह मेरे लिए बहुत खुशी और गर्व की बात थी। फिर मेरी कविताएँ प्रीतलड़ी पत्रिका में भी प्रकाशित हुईं। 1973 में जब सुरिंदर धंजल ने कनाडा में वतनों पार पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया तो मेरी रचनाएँ भी उसमें प्रकाशित होने लगी। कविता के बाद मैंने कहानियाँ भी लिखना शुरू कर दी। पत्र बांटते-बांटते मैं पहले कवि बना और फिर कहानीकार। 1976 में जब सुरिंदर धंजल को पढ़ाई के लिए विदेश जाना पड़ा तो मैंने वतनों पार के संपादक का दायित्व संभाला।

- उस युग में युवाओं का मार्ग और गंतव्य कहां था ?

सत्तर का दशक उभरती हुई क्रांति का काल था। यह

वृद्धि न केवल पंजाब, पश्चिम बंगाल या भारत में, बल्कि यूरोप में भी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी। युवाओं में क्रांति की चाहत थी। जिसमें मैं भी शामिल था। मेरा कनाडा आ कर मन नहीं लगा था। यहाँ कोई दोस्त भी नहीं था। मेरी दिली इच्छा थी कि मैं उच्च शिक्षा प्राप्त करके पंजाब लोट जाऊं। मैं पंजाब जाकर नौकरी करूंगा और क्रांति के लिए काम करूंगा। शादी और बच्चे होने के बाद मेरी जम्मिेदारियाँ बढ़ गईं। मैं कनाडा में हो रहे संघर्षों में शामिल होने लगा। मैं यहां चल रहे संघर्षों में शामिल होने लगा। उस समय यहां रहने वाले लोग पंजाबी किसान और खेत मजदूर थे। कैनेडियन किसान ट्रेड यूनियन में काम करते हुए, मैने नस्लवाद के खिलाफ और पंजाबी श्रमिकों के अधिकारों के लिए संघर्ष में सक्रिय रूप से भाग लेना शुरू कर दिया। मैंने सोचा, संघर्ष तो यहां भी चल रहा है। चाहे वह कहीं भी हो, संघर्ष तो संघर्ष ही है। एमए की पढ़ाई के दौरान पारिवारिक प्रतिबद्धताओं और इधर-उधर के संघर्षों के कारण मैने पंजाब लौटने का विचार त्याग दिया। मैने यहीं रहने और पंजाबी बने रहने का निर्णय लिया।

– नास्तिक बनने की कहानी ?

मेरे नास्तिक बनने में साहित्य की प्रमुख भूमिका है। मैंने बचपन से ही साहित्य पढ़ना शुरू कर दिया था। इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। जब मैं पंजाब में था, तब दर्शन सिंह कैनेडियन और अन्य कम्युनिस्ट हमारे घर आते-जाते रहते थे। उनके शब्द मेरे कानों तक लगातार पहुँचते रहे। हालाँकि मैं तब पाँच या सात वर्ष का ही था। मुझे वो बातें समझ में नहीं आती थी, लेकिन उन बातों का मुझ पर निश्चित रूप से प्रभाव पड़ा। एक और भी घटना है जब मैं फगवाड़ा में अध्ययन कर रहा था। गर्मी का मौसम था। जब मैं स्कूल से घर लौटा तो मुझे बहुत भूख लगी हुई थी, घर पहुंचा तो पता चला कि घर पर रोटी नहीं बनी है। उस दिन का हमारे परिवार का खाना गांव में एक दोस्त के घर पर था। जब हम वहां भोजन करने गए तो उन्होने एक साधू-बाबा को अपने घर पर आमंत्रित किया हुआ। जब हम वहां पहुँचे तो हमें बताया गया कि बाबा ने लंगर बंद करवा दिया है। इसका मतलब थाआज हमें रोटी न मिलेगी। मैं बहुत क्रोधित हुआ और सोचने लगा कि ये बाबा लोग कौन हैं जो मुझे रोटी भी नहीं खाने देते। उन दिनों में मुझे साधु-संतों और बाबाओं द्वारा लोगों को अपने पीछे फंसाने, उन्हें गुमराह करने और उनकी मजबूरियों और कठिनाइयों का फायदा उठाकर उन्हें लूटने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली सभी चालें समझ में आ गई थीं। ऐसी घटनाओं ने भी मेरे नास्तिक बनने में भूमिका निभाई।

पांचवीं कक्षा में पढ़ते समय प्रीतलड़ी का पाठक बनना भी मुझे इस राह पर ले आया। छोटी उम्र में ही मैं तर्कशील विचारों का समर्थक बन गया। जैसे-जैसे मैं जीवन की लंबी यात्रा पर आगे बढ़ता गया, पढ़ता गया, लिखता गया और अध्ययन करता गया, पिछले कई वर्षों से मुझे नास्तिक हुँ और यह मेरे लिए खुशी और संतुष्टि का स्रोत है। मैंने अपनी जेब में लिख कर डाल लिया है कि मेरे मर जाने के बाद कोई भी धार्मिक अनुष्ठान नहीं किया जाए।इस बात का मेरा परिवार को भी पता है।

– अंधविश्वासों के बारे में आप क्या कहेंगे ?

ये पिछड़ेपन के लक्षण हैं। दरअसल अंधविश्वास और अंधश्रद्धा हमारी मान्यताओं के कारण ही हैं। जब तक हम अपनी मान्यताओं पर सवाल नहीं उठाएंगे, तब तक हम अंधविश्वासों और भ्रांतियों से छुटकारा नहीं पा सकते।

जहां तक आस्था का प्रश्न है, इसकी वास्तविकता पर भी विचार करने की आवश्यकता है। पंजाब में लगभग 12 हजार गांव हैं। गांवों में बनाए गए डेरों की संख्या 18 हजार है। एक -एक गांव में भी कई गुरुद्वारे और मंदिर हैं। छोटे-छोटे गांवों में भी धर्म का प्रचार के लिए चार सपीकर लगा रखे हैं। गांवों में सुबह-शाम धार्मिक प्रचार तो निर्विघन रूप से चलता है, लेकिन एक भी ईमानदार व्यक्ति मिलना मुश्किल है। यह सोचने का प्रश्न है कि इतने धार्मिक प्रचार के बावजूद भी एक ईमानदार व्यक्ति नहीं मिल पाता।

–क्या नास्तिकता भारत की पहचान रही है ?

हां बिल्कुल। चार्वाक, महात्मा बुद्ध और जैन धर्म के समय में नास्तिकता भारत की पहचान थी। देवी प्रसाद चट्टोपाध्याय ने इस पर काफी कार्य किया है। वह भूमि जहां नास्तिकता विरासत थी, अब धर्म का प्रभुत्व है।

मैं नास्तिक क्यों हूँ स्वतंत्रता सेनानी शहीद भगत सिंह द्वारा लिखित एक महत्वपूर्ण लेख है। यह बहुत प्रभावशाली और उच्च गुणवत्ता वाला लेख है। प्रसिद्ध लेखक बर्ट्रेंड रसेल ने 1927 में 'मैं ईसाई क्यों नहीं हूं?' नामक पुस्तक लिखी थी। पंजाबी समुदाय में ऐसे विचारों को बढ़ावा देने के लिए मैंने 2012 में नास्तिक बानी नामक पुस्तक लिखी। इस कार्य को पुरा करने के लिए मैंने विश्व-प्रसिद्ध नास्तिकता की विचारधारा को बढ़ावा देने वाले प्रसिद्ध विद्वानों, बुद्धिजीवियों और लेखकों के विचारों को एकत्रित किया। अब मैंने इस पुस्तक के लिए कड़ी मेहनत से और अधिक सामग्री एकत्रित कर ली है।

***

विज्ञान से कला

–धर्मेन्द्र आजाद

आज जकार्ता (इंडोनेशिया) में सुहानी शाह का लाइव शो देखने का अवसर मिला – और सच कहूं तो, यह सिर्फ एक मनोरंजन कार्यक्रम नहीं था, बल्कि इंसानी दिमाग की संभावनाओं को समझने का एक बेहद रोमांचक और प्रेरणादायक अनुभव था।

सुहानी शाह सिर्फ एक जादूगर नहीं हैं, बल्कि मनोविज्ञान, बॉडी लैंग्वेज और मानवीय व्यवहार की गहरी समझ रखने वाली एक शानदार परफ़ॉर्मर हैं।

उनके ट्रिक्स ऐसे होते हैं जो सोच की सीमाओं को तोड़ देते हैं – लेकिन जो बात उन्हें सबसे ख़ास बनाती है, वह है उनकी ईमानदारी और पारदर्शिता।

सुहानी साफ़ कहती हैं कि उनके सारे करतब किसी चमत्कार या आध्यात्मिक शक्ति का नतीजा नहीं, बल्कि इंसानी मन और व्यवहार को समझने की वैज्ञानिक तकनीकों और सालों की ट्रेनिंग का परिणाम हैं।

इसी वैज्ञानिक नजरिए से उन्होंने बागेश्वर धाम के बाबा धीरेंद्र शास्त्री के तथाकथित चमत्कारिक दावों की भी सच्चाई सामने रखी थी।

जो बाबा दावा करता था कि वह परची पढ़कर लोगों की ज़िंदगी की बातें बिना बताए जान लेता है– सुहानी ने बाबा की ट्रिकों को एक्सपोज़ कर दिखाया कि कैसे कुछ सामान्य सवालों और इंसान के हावभाव को देखकर उसके मन की बात का अंदाज़ा लगाया जा सकता है – जो एक कला है, और प्रशिक्षण से विकसित की जा सकती है।

सुहानी के लिये सबसे ज़्यादा सम्मान इस बात का है कि वह कभी अपने काम को चमत्कार नहीं कहतीं।

वो विनम्रता से कहती हैं – "I'm not gifted, I'm trained."

और यही सोच उन्हें उन ढोंगी बाबाओं से अलग बनाती है, जो अधकचरे ज्ञान और अंधविश्वास के ज़रिए लोगों को भ्रमित करते हैं।

आज का शो चौंकाने वाला था, लेकिन धोखे वाला नहीं – और शायद यही सुहानी शाह की सबसे बड़ी खूबी है।

इस अनुभव ने न सिर्फ मनोरंजन किया, बल्कि सोचने के नए दरवाज़े भी खोले।

मैं घास हूँ

मैं आपके हर किए–धरे पर उग आऊँगा
बम फेंक दो चाहे विश्वविद्यालय पर
बना दो होस्टल को मलबे का ढेर
सुहागा फिरा दो भले ही हमारी झोपड़ियों पर
मेरा क्या करोगे
मैं तो घास हूँ हर चीज़ पर उग आऊँगा
बंगे को ढेर कर दो
संगरूर मिटा डालो
धूल में मिला दो लुधियाना ज़िला
मेरी हरियाली अपना काम करेगी...
दो साल... दस साल बाद
सवारियाँ फिर किसी कंडक्टर से पूछेंगी
यह कौन–सी जगह है
मुझे बरनाला उतार देना
जहाँ हरे घास का जंगल है
मैं घास हूँ, मैं अपना काम करूँगा
मैं आपके हर किए–धरे पर उग आऊँगा ।।

–पाश

ईमान

चांदी के चंद सिक्कों के लिए,
कुछ लोग ईमान बेच देते हैं।
पहन कर सच का लिबास,
झूठ की दुकान बेच देते हैं।
करतें हैं जो चौखट पर रक्षा,
वही लोग मकान बेच देते हैं।
जात पात नस्ल मजहबों का,
नफ़रत भरा समान बेच देते हैं।
जलाकर बस्ती को आग में,
मुर्दों के श्मशान बेच देते हैं।
कुछ लोग हैं तेरे इस शहर के,
जो औरों की जान बेच देते हैं।
तेरी तो क्या औकात है सोनी,
लोग तो अपनी जुबान बेच देते हैं।

–जसवीर सोनी

साँपों की विचित्र दुनिया

– राम स्वर्ण लक्खेवाली

साँप का नाम सुनते ही मन में डर के भाव पैदा हो जाते हैं। साँपों के बारे में कई डरावनी बातें दिमाग में आती हैं। हमारे समाज में यह डर हर किसी के मन में बचपन से ही बैठा दिया जाता है। बच्चों के दिमागों में साँपों का डर कुछ ज्यादा ही होता है। साँप को एक खतरनाक शिकारी जानवर माना जाता है जो हमेशा हमला करने की ताक में रहता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया भर में हर वर्ष 54 लाख लोगों को साँप डंसतें हैं। जिसमें से 81000 से 138000 लोगों की मौत हो जाती है और लाखों लोग अपाहिज हो जाते हैं। संगठन की रिपोर्ट के मुताबिक साँपों के दंश का शिकार होने वालों में ज्यादातर गांव – देहात के लोग होते हैं, जिनमें औरतों और बच्चों की संख्या अधिक होती है। साँपों का शिकार ज्यादातर वे लोग ही होते हैं जो जंगलों में रहते हैं या फिर खेतों में काम करते हैं। साँपों के काटने से होने वाली मौतों में भौगोलिक क्षेत्र का प्रभाव भी होता है। ऑस्ट्रेलिया,यूरोप और उत्तरी अमेरिका के इलाकों मे साँप के डंसने से ज्यादा मौतें नहीं होती। साँप दंश से मरने वाले लोगों मे अधिकांश लोग पिछड़े और अविकसित देशों के हैं, जिनमें स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी होती है। बरसात के मौसम में सर्प दंश के मामले अधिक सामने आते हैं। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक पंजाब में प्रतिवर्ष करीब 80 मौतें सांप के काटने से होती हैं, जबकि गैर– सरकारी आंकड़ों के मुताबिक यह संख्या कहीं ज्यादा है। पूरे भारत में हर वर्ष 50000 लोगों की मौत सांप दंश से होती है। भारत में साँपों की लगभग 300 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से 15 तरह के साँप जहरीले होते हैं। पंजाब में साँपों की लगभग 60 प्रजातियां पाई जाती हैं। पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में साँपों की पांच खतरनाक प्रजातियां पाई जाती हैं, जिनमें कोबरा,करेट, रसल वाइपर, सकेल्ड वाइपर और रेड स्नेक के नाम शामिल हैं।

साँप पूरे भारत में पाए जाते हैं लेकिन सबसे अधिक जहरीले साँप असम, बंगाल, बिहार और ओडिशा में पाए जाते हैं। साँप केवल अपनी आत्मरक्षा के लिए या अपने भोजन का शिकार करने के लिए ही दूसरों पर हमला करते हैं। जो साँप जहरीले नहीं होते वे अपने शिकार को केवल डंक ही मारते हैं,उससे व्यक्ति की मृत्यु नहीं होती। साँप के काटने पर आदमी का घबरा जाना एक साधारण सी बात है क्योंकि साँप का नाम ही डर के साथ जुड़ा हुआ होता है।बरसात के मौसम में सांपों का प्रकोप अधिक होता है। साँपों को घरों के आस–पास जमा कूड़े–कचरे से खाने के लिए चूहे मिल जाते हैं। बढ़ते शहरीकरण के कारण लोगों ने उन क्षेत्रों को भी खत्म कर दिया है जो वन्य जीवों के लिए सुरक्षित माने जाते थे। इसलिए सांप अब शहरी और अर्ध शहरी क्षेत्र में भी आम हो गए हैं। साँप अक्सर खेतों में चूहों के बिलों के आस–पास पाए जाते हैं। आजकल साँप घरों के बाथरूम में डरेन पाइप के जरिए भी घुस जाते हैं। अज्ञानता और अंधविश्वास के कारण ज्यादातर लोग साँप के जहर के प्रभाव से बचने के लिए झाड़–फूंक को प्राथमिकता देते हैं। ऐसे में अगर काटने वाला साँप जहरीला हो तो समय पर इलाज न होने पर ज्यादातर लोगों की मौत हो जाती है। साँप के काटने के बाद किसी भी व्यक्ति का अर्धबेहोशी की स्थिति में जाना सामान्य बात है। साँप के काटने के सामान्य लक्षणों में दिल की धड़कन तेज होना, घबराहट, दौरे, दृष्टि धुंधली होना, सूजन आना और उल्टी आना शामिल है।

साँपों से जुड़े अंधविश्वास

साँपों से जुड़े कई अंधविश्वास हैं जिनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। साँपों के जहर, डंक, बीन की आवाज सुनने, सर्पदंश के इलाज को लेकर अनेकों प्रकार के अंधविश्वास जुड़े हुए हैं जैसे कि साँप के कान होते हैं और वे मदारी की बीन पर नाचने लग जाते हैं, साँप के जहर का इलाज झाड़ –फूंक और मंत्र से किया जा सकता है, साँप के सिर मे मणी होती है, साँप बदला भी लेता है और रूप भी बदलता है, दूध भी पीता है यदि गर्भवती स्त्री की छाया साँप पर पड़ जाए तो वो अंधा हो जाता है। ये सभी अंधविश्वास मानवीय अज्ञानता और अवैज्ञानिक समझ का परिणाम हैं। यह बात सत्य है कि साँप के कान नही होते, उसे धरती से आने वाली तरंगों से खतरे का आभास होता

है। साँप का जहर किसी मंत्र या झाड़-फूंक से नहीं उतारता। साँप की केंचुली को लेकर भी कई प्रकार के अंधविश्वास हैं। अज्ञानी लोगों का मानना है कि घर में साँप की केंचुली रखने से धन की प्राप्ती होती है। कुछ लोग साँप की केंचुली को आँखों की बीमारी को ठीक करने के लिए आँखों पर लगाते हैं। लेकिन इन मान्यताओं और अंध विश्वासों मे कोई सच्चाई नहीं है। साँप हर डेढ़ दो महीनों के पश्चात अपनी केंचुली उतरता है क्योंकि यह साँप के विकास में रुकावट पैदा करती है।

भारत के वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1970 के अनुसार व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए साँपों को मारना अपराध है। इसमें तीन से सात साल तक जेल की सजा और 10000 रु का जुर्माना हो सकता है। साँपों और अन्य वन्य जीवों के संरक्षण से जुड़े लोगों का मानना है कि जानवरों को भी जीने का अधिकार है। अंध श्रद्धा निर्मूलन समिति महाराष्ट्र से जुड़े वन्य जीव कार्य करता सुरेश थोमरे का मानना है कि साँप मनुष्य के मित्र हैं और प्रकृति के प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं। साँप के काटने से मरने वाले लोगों की वजह से ही हम साँपों को दुश्मनों की श्रेणी में रखते हैं,लेकिन साँपों के काटने पर ज्यादातर गलतियां इंसानों की ही होती हैं। साँप कभी भी इंसान पर पहले हमला नहीं करते। वह अपनी सुरक्षा के लिए डंक को आखिरी हथियार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। थोमरे का कहना है कि एक साँप एक सप्ताह में चार से छ चूहों को खाता है। एक अजगर एक बार में 15 चूहों को खा जाता है। यदि एक सांप एक सप्ताह में 6 चूहे खाता है तो वह एक महीने में 25 चूहे और एक वर्ष में लगभग 300 चूहे खाएगा। चुहिया और चूहे का एक जोड़ा एक वर्ष में 850 बच्चे पैदा करता है। इसका मतलब यह है कि अगर हम साँप को मारते हैं, तो हम बीमारी फैलाने के लिए चूहों की एक सेना को जीवित रखने में मदद करते हैं। देश के कुल अनाज का 35 प्रतिशत हिस्सा चूहे खा कर बर्बाद कर देते हैं। चूहे खाकर सांप हमारे भोजन को खराब होने से बचते हैं और प्रकृति का संतुलन भी बनाए रखते हैं। इसके अलावा कैंसर, दिल का दौरा और कुष्ठ रोग के लिए बनाई जाने वाली दुवाओं में भी साँप के जहर का इस्तेमाल किया जाता है। सुरेश थोमरे का कहना है कि अगर साँप के काटने से बचने के लिए ये सावधानियां इस्तेमाल की जाए तो ये बहुत फायदेमंद साबित हो सकती हैं :-

1- चूहों के अवासों के पास सावधानी से जाना चाहिए।

2-खेतों में जाते समय हाथ में छड़ी और पैरों में लंबे जूते पहनने चाहिए।

3-धान या घास के मैदान में चलते समय लाठी लेकर जाना चाहिए। अगर आपके सामने अचानक से कोई साँप आ जाए तो आपको डरना नहीं चाहिए बल्कि जिस चीज को आप ने हाथ में पकड़ रखा है उसे फेंक दें, सांप फेंकी हुई चीज की और चला जाएगा।

4-साँप के काटने पर इलाज में देरी नहीं करनी चाहिए। तत्काल चिकित्सक सहायता लेनी चाहिए।

5- साँप के डंक के इलाज के लिए झाड़- फूंक में समय बर्बाद नहीं करना चाहिए।

6-बिना डॉक्टर की सलाह के कोई भी दवा नहीं लेनी चाहिए।

7-साँप के काटने के बाद व्यक्ति को कुछ भी खाने को नहीं देना चाहिए ऐसा करने से जहर जल्दी शरीर में फैल जाता है

8-साँप को पकड़ने या मारने में समय बर्बाद नहीं करना चाहिए बल्कि व्यक्ति को बचाने का प्रयास करना चाहिए।

राजा बाबू...कुछ काम ये भी करो

डार्विन को हटा दिया किताब से
अब न्यूटन आईंस्टीन हटा दो किताब से
सुकरात प्लूटो औह ब्रूनों
राईट ब्रदर भी हटा दो किताब से
फिर धरती को उठाकर रख दो
शेषनाग के फन पर
और सूरज को बैठाओ घोड़ों के रथ पर
लगवाओ धरती के चक्कर
जब आए सुनामी तो
बैठाओ किसी ढोंगी बाबा को
जो चुल्लू भरे और पी जाए समुंद्र दो।

''तर्कशील पथ'' पढ़ो, ''तर्कशील'' बनो।

ब्रह्माण्ड से हमारा गहरा नाता

– आशीष महाबल

अनुवाद : दिव्या

हमारा आसपास किस्म-किस्म की चीज़ों से बना है। पेड़, जीव-जन्तु, पत्थर, इमारतें, लोहा, नमक, चॉक, वगैरह-वगैरह। लिस्ट लम्बी है। ये सभी चीज़ें अलग-अलग तत्वों (एलिमेन्ट्स) से बनी हैं। हवा में मौजूद गैसें भी या तो खुद तत्व हैं

या कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन जैसे तत्वों के मिलने से बनी हैं। लोहा तत्व है और नमक में पाए जाने वाला सोडियम भी। और चॉक का कैल्सियम भी।

स्कूल में हमने पढ़ा था कि दसियों-लाख साल तक जमीन में दबे रहे पेड़ों से ही कोयला (कार्बन) मिलता है। और यह भी कि सोना और लोहा खदानों से मिलता है। पर तब यह पूछने का ख्याल नहीं आया कि ये वहाँ पहुँचे कैसे कि अब खुदाई में मिल रहे हैं। तो इसी पर ठहरकर बात करते हैं।

सूरज एक सामान्य तारा है – यानी न तो बहुत भारी और न बहुत हल्का। हमें ऊर्जा सूरज से मिलती है। इसका 98त्न हाइड्रोजन और हीलियम से बना है। ये सबसे हल्के तत्त्व हैं। सूरज में हीलियम बनने के लिए हाइड्रोजन में बहुत उच्च तापमान और दबाव के कारण संलयन (फ्यूजन) होता है। इस प्रक्रिया से निकलने वाला प्रकाश पृथ्वी तक पहुँचता है। पिछले 4.6 अरब सालों से सूरज में हाइड्रोजन से हीलियम में बदलने की प्रक्रिया चल रही है। और आगे अभी पाँच अरब सालों तक चलती रहेगी।

हाइड्रोजन के खत्म होते ही हीलियम में बदल जाने के बाद सूरज का सिकुड़ना शुरू हो जाएगा। इससे तापमान बहुत बढ़ जाएगा। और किसी चरण में हीलियम का फ्यूजन शुरू हो जाएगा। तब सूरज एक विशाल लाल तारे में तब्दील होगा और हो सकता है पृथ्वी को निगल जाए। हीलियम के फ्यूजन के दौरान के कारकों से नए तत्त्व बनेंगे।

अब सवाल यह है कि धरती पर जो तत्त्व हैं, वह कहाँ से आए? धरती पर पाए जाने वाले ऑक्सीजन, लोहा, ऐल्युमिनियम जैसे दूसरे तत्त्वों की तरह कार्बन भी सूरज के फ्यूजन से नहीं बने हैं। ये तो इंसानों की तरह पुराने तारों से बने हैं।

तारों की आयु उनके आकार और द्रव्यमान (मास) पर निर्भर करती है। छोटे तारे जिनका द्रव्यमान हमारे सूरज के कम होता है, बहुत लम्बा जीते हैं। कई-कई अरब साल तक। सूरज जैसे तारे कुछ अरब साल तक ही रहते हैं। उनसे बड़े तारे सिर्फ कुछ करोड़ साल जीते हैं। उनका द्रव्यमान बहुत तेज़ी-से ऊर्जा छोड़ कर खत्म करता है और वे और जल्दी मर जाते हैं। उनकी मौत विस्फोट के रूप में होती है। इसे सुपरनोवा कहते हैं। जब तारों में हीलियम का फ्यूजन पूरा हो जाता है तब वे और भारी तत्त्व जैसे कार्बन, कैल्शियम, सोडियम, लोहा आदि बनाते हैं। जो तारे सुपरनोवा बनते हैं उनमें विस्फोट के वक्त बहुत उच्च तापमान के कारण सोना बनाने की भी क्षमता होती है।

पृथ्वी पर जो भी सोना है, वह किसी पुराने विशाल तारे के विस्फोट से आया है। जबकि कैल्शियम, सोडियम, लोहा बड़े तारे में फ्यूजन से बनते हैं। हड्डियों में कैल्शियम से लेकर पूरे शरीर में व्याप्त लोहा (32.1%) है। ऑक्सीजन 30.1%, कार्बन 15.1% और मैग्नीशियम 13.9% है। कुल मिलाकर पृथ्वी पर मौजूद तत्त्वों का 91% इन्हीं से है। इनमें से ऑक्सीजन ही सूरज जैसे तारों में बनी हो सकती थी। पर सूरज अभी इतना कमजोर है कि इतनी सारी ऑक्सीजन बना पाना उसके बस में नहीं है।

हमारे शरीर में हीमोग्लोबिन ऑक्सीजन को शरीर के अलग-अलग हिस्सों तक पहुँचाता है। हीमोग्लोबिन में लोहा होता है। दिलचस्प बात यह है कि हीमोग्लोबिन में लौह किसी पुराने तारे के अन्दर बना है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक कार्ल सागन ने अपने टीवी शो ''कॉसमॉस: ए पर्सनल वायज'' में कहा था :

''हमारा ब्रह्मांड शीतल है। हम तारों के रज से बने हैं। ब्रह्मांड का खुद को जानने का बस एक जरिया है हम।''

तो क्यों न हम भी ब्रह्मांड के रहस्य खुद को जानें। ब्रह्मांड कहाँ से आया ? और हम क्यों हैं ? यह किसी की सोच और प्रयोगों से जान सकते हैं।

इसी बात पर हम थोड़ा अपने सौरमण्डल को जान लेते हैं। सौरमण्डल यानी हमारे सूरज का परिवार। इनमें पृथ्वी, बृहस्पति और नेप्च्यून जैसे ग्रह हैं। कई ग्रहों के अपने चाँद हैं जो इनके चक्कर काट रहे हैं। ऐस्ट्रॉयड्स और कॉमेट्स हैं जो सूरज की परिक्रमा कर रहे हैं। इंसान चाँद और मंगल के अलावा एक ऐस्ट्रॉयड पर भी अपना यान भेज चुका है। ये यान दसियों साल से यात्रा करते हुए अब सौरमण्डल के बाहरी हिस्से के करीब पहुँच चुके हैं और वहाँ की जानकारी भेज रहे हैं।

कुछ ऐस्ट्रॉयड्स गुरुत्वाकर्षण के कारण पृथ्वी की ओर खिंचे आ सकते हैं। अगर ये आकार में बड़े हों तो पृथ्वी को काफी नुकसान भी पहुँचा सकते हैं। कई वैज्ञानिकों का मानना है कि कुछ पचास लाख साल पहले ऐसे ही किसी हादसे से डायनासोरों का पृथ्वी से खात्मा हो गया था। इसलिए हम वैज्ञानिक ऐस्ट्रॉयड्स पहचानते हैं और उनकी सूची बनाने में लगे हैं। इसी प्रक्रिया (डेटा) के दौरान हमने पाया कि एक छोटा यान एक ऐस्ट्रॉयड से टकराया। ये एक दूसरे ऐस्ट्रॉयड के साथ घूम रहा था। प्रयोग का मकसद यह देखना था कि एक खास मात्रा में ऊर्जा के इस्तेमाल का क्या असर होता है। ताकि पृथ्वी की तरफ आते ऐस्ट्रॉयड की कक्षा (ऑर्बिट) बदली जा सके।

सूरज में भी छोटे बदलाव होते रहते हैं। खासकर उसके मैग्नेटिक फील्ड में। लगभग हर ग्यारह साल में सूरज से आवेशित कणों के फव्वारे छूटते हैं। इनके पृथ्वी तक पहुँचने पर ध्रुवीय क्षेत्र (नॉर्दर्न लाइट्स) में सुंदर प्रदर्शन को देखा जाता है। इन दिनों नज़ारा दिखाई दे रहा है। पृथ्वी के पास के ऐसे बदलाव अनतिर्श मौसम कहलाते हैं। इन फव्वारों के कारण सैटेलाइट्स से कम्युनिकेशन में बाधा आ सकती है।

हमारी अंतरिक्ष एजेंसी में सौरमण्डल के बाहर और भी यान हैं। और हमारी आकाशगंगाओं की तरह अंतरिक्ष में खरबों आकाशगंगाएँ हैं। इनके बारे में हम क्या भी नहीं जानते। तब तक क्यों न हम अपने आसपास के तत्वों के बारे में और खोज कर देखें ? पता लगाएँ कि हम किस-किस तरह से ब्रह्माण्ड से जुड़े हैं।

कविता के हत्यारे...



सुरजीत पातर (पंजाबी कवि)

मैं पहली पंक्ति लिखता हूं

और डर जाता हूँ राजा के सिपाहियों से पंक्ति काट देता हूँ

मैं दूसरी पंक्ति लिखता हूँ

और डर जाता हूं बागी गुरिल्लों से पंक्ति काट देता हूँ

मैंने अपने प्राणों की खातिर अपनी हजारों पंक्तियों को ऐसे ही कत्ल किया है

उन पंक्तियों की ज़मीर

अक्सर मेरे आसपास ही रहती हैं

और मुझे कहती हैं:

कवि साहिब

कवि हैं या कविता के कातिल हैं आप?

सुने मुंसिफ बहुत इंसाफ के कातिल बड़े धर्म के रखवाले
खुद धर्म की ज़मीर को कत्ल करते भी सुने थे

सिर्फ यही सुनना बाकी था कि हमारे वक्त में खौफ़ के मारे
कवि भी बन गए

कविता के हत्यारे ।

अनुवाद : कात्यायनी (हिंदी कवयित्री)

पेरियार के कुछ सवाल

–शेषनाथ वर्णवाल

आज़ादी से पहले और इसके बाद भी दक्षिण भारतीय राज्यों, खासकर तमिलनाडु में पेरियार का बड़ा ही गहरा असर रहा है। दक्षिण भारतीय लोग उनका बहुत अधिक सम्मान करते हैं। पेरियार के नाम से प्रसिद्ध, ई. वी. रामास्वामी का न केवल सांस्कृतिक बल्कि तमिलनाडु के सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्यों पर भी असर इतना गहरा है कि चाहे कम्युनिस्ट हों या दलित आन्दोलन से जुड़े लोग, सब उनसे प्रभावित रहे हैं।

तमिल राष्ट्रभक्त से लेकर नास्तिकों, तर्कवादियों और नारीवाद की ओर झुकाव वाले भी उनका सम्मान करते हैं। उनके विचारों व कार्यों का हवाला देते हैं और उन्हें एक मार्गदर्शक के रूप में देखते हैं। तर्कवादी, नास्तिक और वंचितों के हित में बोलने व कार्य करने के कारण, उनकी सामाजिक और राजनीतिक ज़िंदगी ने कई उतार चढ़ाव देखे।

इरोड वेंकट नायकर रामासामी (17 सितम्बर, 1879–24 दिसम्बर, 1973) जिन्हें पेरियार के नाम से अधिक जाना जाता हैं, बीसवीं सदी के तमिलनाडु के एक महत्वपूर्ण और लोकप्रिय राजनेता थे। उनकी उपाधि पेरियार, दरअसल तमिल में सम्मानित व्यक्ति के लिए प्रयोग किया जाता है।

वे रुढ़िवादी हिन्दुत्व के प्रबल विरोधी थे। जस्टिस पार्टी का गठन के सिद्धान्त में रुढ़िवादी हिन्दुत्व का विरोध था। भारत में, हिन्दी के अनिवार्य रूप से शिक्षण में प्रयोग का भी उन्होंने घोर विरोध किया। उत्तर भारतीय हिंदी क्षेत्रों में हालाँकि इनकी लोकप्रियता कम है, पर धीरे–धीरे लगातार आज बढ़ती ही जा रही है।

भारतीय, खासकर दक्षिण भारतीय समाज के शोषित–उत्पीड़ित लोगों की स्थिति सुधारने तथा एक तर्कशील सांस्कृतिक आन्दोलन चलाने में इनका नाम शीर्षस्थ है। पेरियार की मूर्तियों के नीचे लिखा था– 'ईश्वर नहीं है और ईश्वर बिलकुल नहीं है। जिस ने ईश्वर को रचा वह बेवकूफ है, जो ईश्वर का प्रचार करता है, वह दुष्ट है और जो ईश्वर की पूजा करता है वह बर्बर है।'

इस तरह के कड़े शब्दों में ईश्वर पर सवाल उठाने के कारण पेरियार को रुढ़िवादी भारतीय समाज ने लगातार नकारने की कोशिश की है। हालाँकि आज जबकि भारत में नास्तिकता व तर्कशील अन्दोलन सोशल मीडिया के कारण लगातार फैलता जा रहा है और नास्तिकों की संख्या बढ़ती जा रही है, लोग बड़ी संख्या में उनकी उक्तियों, सिद्धांतों, सवालों आदि को प्रचारित–प्रसारित कर रहे हैं।

आईये देखते हैं! महान तर्कशील, नास्तिक और समाज–सुधारक पेरियार के द्वारा ईश्वर से क्या क्या सवाल किये गए। हालाँकि ये सवाल कहने को तो ईश्वर को संबोधित हैं, पर वास्तव में सामाजिक कुरीतियों पर समाज को अप्रत्यक्ष रूप से पूछा गया है।

1. क्या तुम कायर हो जो हमेशा छिपे रहते हो, कभी किसी के सामने नहीं आते ?
2. क्या तुम खुशामद परस्त हो जो लोगों से दिन रात पूजा, अर्चना करवाते हो ?
3. क्या तुम हमेशा भूखे रहते हो जो लोगों से मिठाई, दूध, घी आदि लेते रहते हो ?
4. क्या तुम मांसाहारी हो जो लोगों से निर्बल पशुओं की बलि मांगते हो ?
5. क्या तुम सोने के व्यापारी हो जो मंदिरों में लाखों टन सोना दबाये बैठे हो ?
6. क्या तुम व्यभिचारी हो जो मंदिरों में देवदासियां रखते हो ?
7. क्या तुम कमजोर हो जो हर रोज होने वाले बलात्कारों को नही रोक पाते ?
8. क्या तुम मूर्ख हो जो विश्व के देशों में गरीबी–भुखमरी होते हुए भी अरबों रुपयों का अन्न, दूध, घी, तेल बिना खाए ही नदी नालों में बहा देते हो ?
9. क्या तुम बहरे हो जो बेवजह मरते हुए आदमी, बलात्कार होती हुयी मासूमों की आवाज नहीं सुन पाते ?
10. क्या तुम अंधे हो जो रोज अपराध होते हुए नहीं देख पाते ?
11. क्या तुम आतंकवादियों से मिले हुए हो जो रोज धर्म के नाम पर लाखों लोगों को मरवाते रहते हो ?
12. क्या तुम आतंकवादी हो जो ये चाहते हो कि लोग तुमसे डरकर रहें ?
13. क्या तुम गूंगे हो जो एक शब्द नहीं बोल पाते लेकिन करोड़ों लोग तुमसे लाखों सवाल पूछते हैं ?
14. क्या तुम भ्रष्टाचारी हो जो गरीबों को कभी कुछ नहीं देते जबकि गरीब पशुवत काम करके कमाये गये पैसे का कतरा–कतरा तुम्हारे ऊपर न्यौछावर कर देते हैं ?
15. क्या तुम मुर्ख हो कि हम जैसे नास्तिकों को पैदा किया जो तुम्हे खरी खोटी सुनाते रहते हैं और तुम्हारे अस्तित्व को ही नकारते हैं ?

जन्मपत्री नहीं संस्कार मिलाएं

- कांतादेवी शर्मा

क्या आप बेटी के लिए वर की तलाश में हैं?

कई माता-पिता लड़की को अधिक पढ़ाने के पक्ष में नहीं होते हैं। अत: वे कामचलाऊ शिक्षा दिला कर जल्दी शादी कर देते हैं। लेकिन इस आधुनिक युग में कुछ मातापिता लड़की के प्रति उदारता बरतते हैं। वे उन्हें उच्च शिक्षा दिलाने के पक्ष में होते हैं और उन्हें उच्च शिक्षा दिलाते भी हैं।

उच्च शिक्षा प्राप्त करते समय बहुत सी लड़कियां अपनी इच्छा के अनुसार अपने किसी सहपाठी को पसंद कर जीवनसाथी बना लेती हैं। यह बाद में मालूम पड़ता है कि उन का चयन सही था अथवा गलत। कारण यह है कि प्यार के सपने देखने में और वास्तविकता में काफी अंतर होता है।

कुछ लड़कियां ऐसी भी होती हैं जो उच्च शिक्षा प्राप्त करने पर भी किसी के प्रेमजाल में नहीं फंसती हैं। और शादी का मामला अपने मातापिता पर ही छोड़ देती हैं।

लड़की जब अधिक शिक्षा प्राप्त कर लेती है तो उस के लिए उपयुक्त वर मिलना बड़ा मुश्किल हो जाता है। मातापिता खोज कर परेशान हो जाते हैं. उधर लड़की की उम्र भी बढ़ने लगती है। समाज के ताने भी मातापिता के कलेजे को बींधने लगते हैं। लिहाजा कई बार मातापिता उच्च शिक्षा प्राप्त लड़की की शादी कम शिक्षित और गुण व योग्यता में लड़की की तुलना में साधारण लगने वाले लड़के से कर देते हैं। ऐसे हालात लड़की के जीवन को जहरीला ही नहीं बना देते, बल्कि कई बार तो मरने पर मजबूर कर देते हैं।

हमारा समाज पुरुष प्रधान है। पुरुष हर काम में कर्ताधर्ता समझा जाता है। अपने से अधिक पढ़ी-लिखी लड़की को पा कर पति अधिक दिन खुश नहीं रहता है। वह नहीं चाहता कि कोई तीसरा व्यक्ति उसे पत्नी से अयोग्य अथवा कम पढ़ालिखा समझे। अन्य लोगों द्वारा पत्नी की तारीफ किए जाने पर या यों कहें कि पत्नी की गिनती अपने से श्रेष्ठ लोगों में होने के कारण ऐसे पति कुंठाग्रस्त हो जाते हैं और अपनी हीन भावना व कंठा के कारण हिंसक बन जाते हैं। यही हिंसा पति से ज्यादा योग्य पत्नी की मौत का कारण बन जाती है।

यह कोई कपोलकल्पित कहानी नहीं है, बल्कि वास्तविकता है। रीता अपने पति से ऊंची नौकरी पर बहाल थी। शादी को 7 दिन भी नहीं हुए थे कि उस के पति ने उस की हत्या कर दी।

दूसरा उदाहरण नरेंद्र कुमारी का है। योग्य वर न मिलने के कारण उस के पिता ने उस से कम पढ़े-लिखे और मामूली नौकरी करने वाले अशोक से उस की शादी कर दी। शादी होते ही बेचारी के जीवन में तूफान आ गया और शादी के 2 साल पूरे होतेहोते पति ने उसे हमेशा के लिए सुला दिया।

पुरुषों की मानसिकता

भारतीय नारी तो पुरुष को पति रूप में आसानी से स्वीकार कर लेती है, चाहे वह कम कमाता हो, अथवा अनपढ़ हो। लेकिन पुरुष का स्वभाव ठीक इस के विपरीत है। वह नहीं चाहता कि उस की पत्नी को कोई उस से अधिक श्रेष्ठ समझे।

कई बार पारस्परिक विचारों का न मिलना भी जीवन के लिए अभिशाप बन जाता है। स्वच्छंद और सुलझे हुए विचारों वाली लड़की को रूढिवादी लड़के के हाथों सौंप देना भी कभीकभी लड़की की जिंदगी ले बैठता है।

लंदन में बड़ी हुई, खूब पढ़ीलिखी लड़की नमिता की शादी एक भारतीय डाक्टर से कर दी गई। वह डाक्टर जरूर था, लेकिन गांव का रहने वाला, रूढिवादी विचारों का था। इस शादी के लिए नमिता के पिता ने काफी विरोध किया। उन का कहना था कि लंदन में पली हुई, पाश्चात्य विचारों वाली लड़की का भारत में रह रहे परिवार में निर्वाह नहीं होगा, लेकिन मां की जिद थी कि वह अपनी बेटी का विवाह भारत में ही करेगी। फिर दामाद को भी लंदन में ला कर बसा लेंगे।

नमिता के माता-पिता भारत आए। उन्हें पढ़ा-लिखा डाक्टर लड़का भी मिल गया। उसे शादी के बाद अपने साथ लंदन ले गए तथा बेटी व दामाद को हनीमून मनाने भेज दिया। वहां पर नमिता के साथ और भी 6 जोड़े हनीमून को गए थे। रात के खाने के बाद सब ने नाच का कार्यक्रम रखा। डाक्टर उस में शरीक नहीं हुआ। वह सिर्फ नाच देखने के लिए अलग कुरसी ले कर बैठ गया।

नमिता भी नाच में शामिल हुई और पति के सामने ही

शेष पृष्ठ 39 पर

श्रमिकों का दिन

– जसवंत मोहाली

यह घटना वर्ष 1886 में 4 मई को शिकागो में घटी थी । बाद में धीरे–धीरे मई की पहली तारीख को मनाया जाने वाला यह दिन, जिसको अंतरराष्ट्रीय मजदूर दिवस कहा जाता है। यह वह समय था जब अमेरिका को ब्रिटेन की गुलामी से आजाद हुए एक सदी बीत चुकी थी । उद्योग अब बड़ी फैक्ट्री में तब्दील हो रहे थे। औद्योगिक श्रमिकों के काम करने के घंटों का कोई हिसाब ना था। मार्क्स पूंजीवाद का विश्लेषण करके रुखसत हो चुका था। उसने विश्व को बताया कि हमारी दिनचर्या के दो हिस्से होते हैं – एक में हम जिंदगी जीते हैं और दूसरे में जीने के लिए कमाते हैं। एक श्रमिक जब अपने परिवार और बच्चों के साथ बैठकर चाय काहवा पी रहा होता है, वह जीना होता है। इन कुश क्षणों को जीने के लिए वह 12 से 16 घंटे काम करता है। जीने के पल उसके अपने हैं, जबकि काम के घंटे पूंजीपति के मुनाफे के हिस्से में जाते हैं। दिन के काम करने के समय को सीमित करना होगा और जिंदगी जीने के समय को बढ़ाना होगा। धीरे–धीरे श्रमिकों में जागरूकता बढ़ी, संगठन व पार्टियां बनीं। पूंजीपति को अपने लाभ के हिस्से का समय मजदूर को वापस करना मंजूर नहीं था। संघर्ष हुए, कोर्ट केस चले, जेल व फांसियां हुईं । आखर 8 घंटे के काम की दिन दुनिया भर में तय कर दिया गया। पूंजी और श्रम का संकल्प किसी देश, क्षेत्र या मजहब से पार होता है। इसीलिए मजदूरों का यह दिन अंतरराष्ट्रीय है। इसके मुकाबले में किसी भी धर्म के इतिहास के दिन स्थानीय हुआ करते हैं।

लेकिन अब 139 वर्ष बीत जाने के बाद मई दिवस का महत्व क्या है?इस बात को समझना अतिआवश्यक है। अब के दौर मे आधुनिक मशीनों और तकनीक के साथ हर वस्तु की पैदावार हजारों गुना बढ़ गई है। तो क्या इस बड़ी हुई उत्पादकता का लाभ समाज और श्रमिक को नहीं मिलना चाहिए? क्या उसके दिन में 8 घंटे काम करवाने का समय और कम नहीं हो जाना चाहिए था ताकि वह अपनी जिंदगी जीने का समय अपने परिवार में, बच्चों में, अपने आप से समय बिता सके। लेकिन क्या आज भी श्रमिक ओवर टाइम लगाने के लिए मजबूर नहीं हैं । पूंजीवाद खप्त से कई गुना अधिक मात्रा में वस्तुओं की पैदावार करता है। पूंजीवाद अपने साथ समय–समय तालाबंदी, रोजगार का छिना जाना, बैंकों का डूबना आदि गंभीर संकट लेकर आता है। अन्य कारणों के अलावा यह संकट वस्तुओं के बहुल उत्पादन के कारण होते हैं, जब के इससे पहले के संकट, वस्तुओं की कमी के कारण होते थे। काम करने के हालात ऐसे हैं कि मजदूर और मुलाजिम मानसिक तनाव में जीवन जी रहे हैं। यहां तक के किसी संस्था या विभाग के अधिकारी व्हाट्सएप पर रात को 11–12 बजे भी काम का संदेश लगा सकते हैं और सुबह 5ः00 बजे भी। लेकिन इसी मध्यमवर्ग को लेबर चौक में से गुजरते हुए कम ही एहसास होता है कि सुबह अपने साथ दो रोटियां बाँध कर लाए 90% श्रमिक बिना काम से वापस घर लौट जाते हैं।

समाज में बराबरी की बात तो सदियों से हो रही थी, लेकिन गैर बराबरी का वैज्ञानिक विश्लेषण करके इसके बदल में समाजवादी व्यवस्था का संकल्प मारकस की विचारधारा ने दिया था। इस व्यवस्था की सृजना के रास्ते में पहला महत्वपूर्ण पड़ाव या हासिल था एक दिन में 8 घंटे का काम तय होना। उसके बाद दुनिया में अनेक देशों में समाजवादी प्रबंध बनने और बिखरने की हकीकत को घटे हुए लगभग तीन दशक बीत चुके हैं। इन तीन दशकों में अमीर और गरीब के बीच आर्थिक खाई गहरी हो गई है। जलवायु प्रदूषण ने लोगों को बीमार किया है, लोकतंत्र के नाम पर भीड़तंतर आप देख ही रहे हैं। मई दिवस के अवसर पर आज यह समझना होगा कि कॉर्पोरेट के मुनाफे की हवस का बदल, समाजवाद लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता ही है। यह आदर्शवाद नहीं है, ना ही महिज संविधानवाद है। उनकी तरफ बढ़ता हर छोटे से छोटा कदम अच्छे भविष्य की बुनियाद बनेगा।

युग पंडित : राहुल सांकृत्यायन

– सरबजीत सोही, ऑस्ट्रेलिया

भारतीय इतिहास में शोध और खोज का एक अनूठा अध्याय महान शोधकर्ता राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है। कोई भी भारतीय राहुल सांकृत्यान के ज्ञान के आगे झुके बिना नहीं रह सकता। अपनी शोध प्रवृत्ति से प्रेरित होकर राहुल नालंदा विश्वविद्यालय में नष्ट हो चुके मूल ग्रंथों की प्रतियां खोजने के लिए चार बार तिब्बत गए थे। बिहार स्थित नालंदा विश्वविद्यालय एक समय भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय था। 1194 ई. में राजा जय चंद की हार के बाद मुहम्मद गोरी के सेनापति बख्तियार खिलजी ने नालंदा विश्वविद्यालय को जला दिया था। ऐसा अनुमान है कि इस आग में लगभग 90 लाख अति दुर्लभ पांडुलिपियाँ, पुस्तकें आदि जल गईं। इतिहासकारों के अनुसार यह आग लगभग साढ़े 6 महीने तक जलती रही। इस प्रकार, एक अमूल्य खजाने को एक क्रूर आक्रमणकारी ने राख के ढेर में तबदील कर दिया। नालंदा विश्वविद्यालय के जलने से बौद्ध धर्म का लिखित ज्ञान लगभग पूरी तरह नष्ट हो गया। भारत में बुद्ध की ज्ञान वापसी का किस्सा भी बहुत रोचक और अत्यंत जोखिम भरा कार्य था। इसके बारे में सोचना भी एक कल्पना थी, लेकिन साहसी शोधकर्ता राहुल सांकृत्यायन ने इसे कैसे संभव बनाया, यह भी अपने आप में एक तप था।

–राहुल के अपने बयान के अनुसार, ''हमारे गले में धूल भर गई थी, कमरे का फर्श एक इंच मोटी धूल की परत से ढका हुआ था। धूल की परतें हटाने के बाद मेरी नजर वहां रखे ताड़–पत्रों की पांडुलिपियों पर पड़ी। धर्मकीर्ति की 25 खंडों वाली प्रामाणिक पुस्तक।'' राहुल सांकृत्यायन लिखते हैं, ''इन पांडुलिपियों को देखकर मन में जो भावना उत्पन्न हुई, उसे शब्दों में वर्णित करना कठिन है।'' वह तिब्बत में माउंट एवरेस्ट के पास एक प्राचीन मठ में आये। भारत में सदियों पहले नष्ट हो चुके दुर्लभ ग्रंथों और पांडुलिपियों की खोज में। वस्तुत: ये ग्रंथ और पांडुलिपियाँ नालंदा विहार विश्वविद्यालय के विशाल पुस्तकालय की थीं। वहां से उन्हें तिब्बत ले जाया गया। तिब्बती बौद्ध भिक्षुओं ने पांचवीं शताब्दी से ही नालंदा में अध्ययन करना शुरू कर दिया था। यहां से लौटते समय वे अपने साथ धार्मिक ग्रंथों की पांडुलिपियां और दुर्लभ पुस्तकें ले जाते थे।

–13वीं शताब्दी में जब नालंदा विश्वविद्यालय को बख्तियार खिलजी ने जला कर नष्ट कर दिया, तो वहां संग्रहीत सभी ग्रंथ और पांडुलिपियां भी नष्ट हो गईं। बौद्ध धर्म के प्रति जुनून, दुर्लभ धर्मग्रंथों और अमूल्य पांडुलिपियों को वापस लाने की इच्छा राहुल को तिब्बत ले आई। लेकिन तिब्बत जाना बहुत कठिन था। लगभग दो महीने तक पैदल चलने और खच्चर से यात्रा करने के बाद ही वहां पहुंचा जा सका। उस समय विदेशियों को तिब्बत में प्रवेश करने से रोका गया था। तिब्बत में भटकना मौत को चाची कहने जैसा था। रास्ते में हमेशा चोरों और डाकुओं का डर बना रहता था। लुटेरे पहले यात्री की हत्या करते थे, फिर उनका सामान लूट लेते थे। इन परिस्थितियों में 26 वर्षीय राहुल अपनी जान जोखिम में डालकर 19 जुलाई 1929 को तिब्बत पहुंचे।

–ब्रिटिश शासन के दौरान भारत–तिब्बत सीमा सील कर दी गई थी। भारत से वहां पहुंचना बहुत कठिन था, लेकिन नेपाल और कश्मीर के रास्ते अंग्रेजों की सूचना के बिना तिब्बत पहुंचा जा सकता था। राहुल ने तिब्बत की अपनी पहली यात्रा के लिए नेपाल मार्ग चुना। वह बौद्ध भिक्षु का वेश धारण कर काठमांडू पहुंचे। वहां से राहुल एक मंगोल भिक्षु लोब–जंग–शेरब के साथ तिब्बत में प्रवेश कर गए। रास्ते में जहाँ कहीं भी उन्हें डाकू मिले, उन्होंने अपनी टोपियाँ उतार दीं और हाथ फैलाकर कहा, 'दया करो! दया करना!' इस प्रकार, लुटेरे उन्हें भिखारी समझकर छोड़ देते थे। सौभाग्यवश उन्हें रास्ते में यात्रियों का अच्छा काफिला मिल गया। वे उस काफिले में शामिल हो गये। सबसे पहले वे 'ऑड्रे पॉन्ड गुम्बा' गए। वहां विभिन्न छात्रावासों में कई देशों से आए लगभग सात हजार भिक्षु रहते थे। वहां रहते हुए उन्होंने चौदह हजार तिब्बती शब्द एकत्र किये और उनके अर्थ भी संस्कृत में लिखे।

यहां रहने के दौरान राहुल की मुलाकात तिब्बती बौद्ध भिक्षु अमदो गेदुन चोफाल से हुई। चोफाल के साथ यात्रा करते हुए वे तिब्बत के सुदूर क्षेत्रों में हजारों वर्ष पुराने मठों तक पहुंचे, जिनके पुस्तकालयों में हजारों वर्ष पुराने संस्कृत ग्रंथ थे जो भारत में लुप्त हो गए थे। चौपाल राहुल के साथ रहे और मार्गदर्शक तथा अनुवादक के रूप में कार्य किया। चोफेल के

साथ राहुल ने कई मठों का दौरा किया और कई लामाओं से भी मुलाकात की। कहा जाता है कि राहुल ने भी इन्हीं लामाओं से दीक्षा ली थी।

–राहुल तिब्बत में पुस्तकों और बौद्ध धर्म पर शोध करने के लिए तीन साल तक रहना चाहते थे, लेकिन पैसे की कमी के कारण वे केवल 15 महीने ही रह सके। इस दौरान उन्होंने कुछ तिब्बती ग्रंथ, पांडुलिपियां और थंका पेंटिंग खरीदीं। उन्हें 22 खच्चरों पर लादकर कलिम्पोंग लाया गया। वापस लौटने पर उन्होंने शालू, ताशी–लुन्ह–पो नेर्थ और ज्ञान–ची मठों से कुछ ग्रंथ खरीदे। उन्हें उपहार स्वरूप कुछ पुस्तकें भी मिलीं। अपनी पहली यात्रा में वे 1619 पाठ लेकर लौटे।

–राहुल ने तिब्बत में संस्कृत ग्रंथ और पांडुलिपियां खोजने की भी कोशिश की, लेकिन असफल रहे। वह उनकी तलाश में फिर से तिब्बत जाना चाहता था। इस यात्रा के लिए उन्हें अपने मित्र और प्रसिद्ध इतिहासकार काशी प्रसाद जायसवाल से वित्तीय सहायता मिली। बिहार रिसर्च सोसाइटी भी मदद के लिए आगे आई है। राहुल ने अपनी दूसरी यात्रा 1934 में की। इस बार वे कश्मीर के रास्ते तिब्बत में दाखिल हुए। पैदल और कभी–कभी गधों पर सवार होकर वह लद्दाख और कारगिल होते हुए तिब्बत पहुंचे। रास्ते में उनका सामना कभी चोरों से, कभी तस्करों से, तो कभी छोटे व्यापारियों से हुआ। इस यात्रा पर उन्हें 363 संस्कृत ग्रंथों की मूल पांडुलिपियां देखने को मिलीं, लेकिन राहुल को उन्हें भारत लाने की अनुमति नहीं मिल सकी। उन्हें हाथ से फोटो खींचने या प्रतिलिपि बनाने की अनुमति थी। आर्थिक तंगी के कारण वह उन सभी पांडुलिपियों की तस्वीरें लेने में असमर्थ थे। उन दिनों फोटोग्राफी इतनी उन्नत नहीं थी। प्रत्येक चित्र बनाने में घंटों मेहनत लगती थी। इसके बावजूद उन्होंने 80 पांडुलिपियों की तस्वीरें लीं। कई प्रतियां बनाई गईं। तिब्बत की इस कठिन लेकिन सफल यात्रा के बाद भी उनका काम अधूरा रह गया।

–25 मई 1936 को राहुल ने तिब्बत की अपनी तीसरी यात्रा की। इससे पहले वह रूस में थे। वहां उन्होंने सुना कि हेमराज शर्मा नामक एक नेपाली पंडित को एक तिब्बती मठ में पांडु लिपि में संस्कृत की एक मूल पांडुलिपि मिली है। इसकी सच्चाई जानने के लिए वे तिब्बत की यात्रा पर निकल पड़े। दो महीने की यात्रा के बाद जुलाई में वह माउंट एवरेस्ट के निकट एक मठ में पहुंचे। वहां उन्हें यह प्रामाणिक विरासत मिली। इस खबर से पूरी दुनिया में हंगामा मच गया। नालंदा विश्वविद्यालय के जलने के दौरान, कुछ बौद्ध महत्वपूर्ण धर्मग्रंथों और पांडुलिपियों के साथ तिब्बत भाग गए थे, जिनमें एक विशेष पुस्तक भी शामिल थी। जिसके रचयिता महान बौद्ध दार्शनिक धर्मकीर्ति थे। दुनिया भर के विद्वान इस बहुमूल्य पुस्तक की खोज में थे। यह पुस्तक मूलतः संस्कृत में थी। संस्कृत ग्रन्थ नष्ट कर दिया गया। लेकिन यह तिब्बती भाषा में मौजूद था।

–राहुल का इस पुस्तक के प्रति प्रेम इतना अधिक था कि उन्होंने मंगोल मूल की विद्वान लोला (एलेना कोज़ीरोव्स्काया) को भी छोड़ दिया। जिनसे उन्होंने महज 23 दिन पहले रूस में शादी की थी। पहली मुलाकात में वह इस पुस्तक का केवल आधा हिस्सा ही प्राप्त कर पाए। लेकिन अपनी अंतिम यात्रा पर उन्हें संपूर्ण मूल पाठ मिल गया। इस पुस्तक पर एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित करने पर भी चर्चा हुई। तब एक जापानी विद्वान ने राहुल के बारे में कहा था, ''राहुल संस्कृत आयिन भले ही कुछ और न करें, लेकिन इस पुस्तक को खोजने के लिए पूरी दुनिया को उनका आभारी होना चाहिए।''

–इस प्रामाणिक पांडुलिपि को खोजने के लिए जर्मन, फ्रांसीसी, जापानी विद्वान भी तिब्बतियों के संपर्क में थे, लेकिन केवल राहुल ही सफल हुए। इस ग्रंथ में महान बौद्ध विद्वान नागार्जुन ने सार्वभौमिक शून्यता के सिद्धांत के बारे में गलत धारणाओं को स्पष्ट किया है। तिब्बत में शालू, पोखांग, नागोर और सा–स्क्य जैसे मठों तक पहुंचना अभी भी बहुत कठिन है। तिब्बत की अपनी तीसरी यात्रा के दौरान उन्हें अश्वघोष के ग्रंथ भी प्राप्त हुए।

–इसके बाद राहुल 1938 में तिब्बत पहुंचे। वहां रहते हुए उन्होंने स्वयं कई अन्य दुर्लभ ग्रंथों की प्रतिलिपियां बनाईं। कंजूर और तंजूर प्राप्त करना उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी। इन यात्राओं के दौरान वे अपने साथ कुल 4500 ग्रंथ, पांडुलिपियाँ, अनुवाद और प्रतियां लेकर आये। पटना लौटकर राहुल ने अपने मित्र काशी प्रसाद जायसवाल की मदद से सभी पांडुलिपियों को व्यवस्थित और वर्गीकृत किया। उन्होंने ये सभी संदर्भ, पांडुलिपियां, ग्रंथों के चित्र और धन्यवाद पत्र पटना स्थित बिहार रिसर्च सोसाइटी को सौंप दिए।

केपी जायसवाल शोध संस्थान के पूर्व निदेशक और 'बुद्ध के पदचिह्न' के लेखक डॉ. जगदीश्वर पांडेय कहते हैं, 'इन्हें लाकर राहुल ने वही सराहनीय कार्य किया, जो सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री ह्वेन त्सांग ने किया था। ह्वेन त्सांग भारतीय ज्ञान को चीन ले गए और राहुल तिब्बत से खोए हुए ज्ञान को वापस भारत ले आए हैं। सचमुच, राहुल सांकृत्यायन की यह खोज बहुत मूल्यवान है और इतिहास की टूटी कड़ियों को जोड़ने वाली है।

–राहुल सांकृत्यायन की विद्वता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वह कुछ ही नहीं, बल्कि दुनिया की 30 भाषाओं के जानकार थे। अपने 70 वर्ष के जीवन काल में उन्होंने लगभग 140 पुस्तकें लिखीं, जिनमें से कई को उत्कृष्ट कृति का दर्जा प्राप्त है। राहुल सांकृत्यायन ने भी ब्रिटिश विरोधी राजनीतिक गतिविधियों के कारण तीन साल जेल में बिताए। बाद में वह कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गये। उस समय भी इस पर प्रतिबंध लगा हुआ था। किसी भी भारतीय विश्वविद्यालय ने उन्हें पढ़ाने के लिए आमंत्रित करना उचित नहीं समझा – क्योंकि उनके पास कोई औपचारिक डिग्री नहीं थी। उन्हें दो बार लेनिनग्राद विश्वविद्यालय, सोवियत रूस और एक बार विद्यालंकार विश्वविद्यालय, श्रीलंका द्वारा आमंत्रित किया गया था।

डिप्रेशन से कैसे बचें ?

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2005–2015 के बीच दुनिया में डिप्रेशन के मरीजों की संख्या लगभग 18 फीसदी का इजाफा हुआ है। भारत में इनकी सध्या 5 करोड़ के पार है। डब्ल्यू एच ओ ने इस वर्ष विश्व स्वास्थ्य दिवस की धीम डिप्रेशन रखी है। डिप्रेशन जितना पुरुषों में देखने को मिल रहा है, उतना ही महिलाओं में भी लेकिन इससे भी बड़ी चिंता का विषय यह है कि भारत जैसे देशों में ज्यादातर महिलाएं अपनी समस्या के वारे में बात नहीं करती हैं और करती भी हैं तो उन्हें गभीरता से नहीं लिया जाता। गंभीर लक्षणों को मूड का नाम देकर नजरअंदाज कर दिया जाता है जिससे वे हताश महसूस करने लगती हैं।

एक्सरसाइज से शरीर में एंडोर्फिन हार्मोन की मात्रा बढ़ती है। जो आपको खुश रहने में मदद करता है। डिप्रेशन में ग्रस्त लोगों में इसके दूरगामी प्रभाव देखे जाते हैं। नियमित व्यायाम दिमाग को साकारात्मक रहने के लिए प्रेरित करता है। स्कॉटलैंड की स्टर्लिंग यूनिवर्सिटी में हुआ एक शोध भी इस बात की पुष्टि करता है कि टहलना अवसाद दूर करता है।

डिप्रेशन को ठीक कर सके ऐसी कोई डाइट नहीं है लेकिन वैज्ञानिकों का मत है कि ओमेगा–3 फैटी एसिड और फॉलिक एसिड युक्त भोजन डिप्रेशन को कुछ हद तक कम कर सकते हैं। वहीं डिप्रेशन अनिंद्रा को भी जन्म देता है। कोशिश करें कि नींद पूरी हो। इसके लिए नियमित समय पर सोएं और जागे और सोते समय टीवी कम्प्यूटर मोबाईल आदि को बंद कर दें।

डिप्रेशन आपके जीवन को दिशाहीन बना सकता है। इसे फिर से ट्रैक पर लाने के लिए रूटीन बनाए। इसकी शुरुआत सुबह जल्दी उठकर मॉर्निंग या जॉगिंग से करें। इस दौरान खाली दिमाग ओर खुली आँखे से प्रकृति की खूबसूरती निहारे। ताजी हवा और गुनगुनी धूप का आनंद थे। इससे आपका पूरा दिन पॉजिटिविटी से भर जायेगा।

रोज की जिम्मेदारियों में व्यस्त रहना अवसाद को दूर रखने में मदद करता है। रोज का एक लक्ष्य जरूर बनाये। छोटी शुरूआत भी काफी है। लक्ष्य ऐसा हो, जिन्हें आसानी से हासिल कर सकें जैसे घर का कोई काम करना, अपनी हाँबी के लिए समय निकालना या कुछ नया सीखना। नया सीखने या खुद को चैलेंज देने से मस्तिष्क में डोपामाइन पैदा होता है।

कैंसर की संभावना कम करे टमाटर

अभी तक विशेषज्ञों का मानना था कि टमाटर में पाया जाने कला तत्व लाइकोपीन प्रोस्टेट कैंसर की संभावना को कम करता है और अब नवीनतम शोधों से पता चला है कि टमाटर का सेवन ह्दय रोगों की संभावना को कम करता है। हाल ही में स्कॉटलैंड में रॉक्ट रिसर्च इंस्टीच्यूट के विशेषज्ञों द्वारा किए गए एक शोध में पाया गया है कि टमाटर में पी–3 नामक एक यौगिक पाया जाता है जो रक्त प्लेटलेट जमने की प्रक्रिया को कम करता है। इस शोध के विशेषज्ञों के अनुसार प्रतिदिन चार टमाटरों का सेवन स्वास्थ्य के लिए अच्छा है। टमाटरों का रस, कच्चा पा पकाकर किसी भी तरह खाना अच्छा है। स्ट्राबेरी और ग्रेप फ्रूट में भी पी श्री नामक यह यौगिक पाया जाता है पर टमाटर में इसकी मात्रा अधिक होती है।

***

यात्रा वृत्तांत अंश:

बोलो मैं राहुल थोराट हूँ....

-रामस्वर्ण लक्खेवाली

यह आवाज अक्सर मराठी, हिंदी और पंजाबी रचनाओं का आदान-प्रदान करते हुए फोन के माध्यम से मन को प्रेरित करती रहती है। राहुल थोराट अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति महाराष्ट्र की प्रसिद्ध मराठी पत्रिका %वारता पत्र% के प्रबंधकिय संपादक हैं। उत्साहपूर्ण भाषण, आगे बढ़ने का जुनून। एक ऐसा व्यक्ति जो ज्ञान और विज्ञान से प्रेम करता हो तथा समाज को एक नई और अच्छी दिशा में ले जाने के लिए व्यस्त जीवन जीता हो। महाराष्ट्र की वैज्ञानिक चेतना और सामाजिक समानता आंदोलन के इस पूर्णकालिक कार्यकर्ता के साथ हमारा जुड़ाव दो दशक पुराना है। कुछ वर्ष पहले हरियाणा में खाप पंचायतों में कहानियां सुनाने आए राहुल ने पंजाब देखने की इच्छा जताई थी। हम उन्हें प्यार और सम्मान के साथ जलियांवाला बाग, देश भगत हॉल और तर्कशील भवन जैसी जगहों पर अपने साथ ले गए। खटकड़ कलां जाकर वे शहीद-ए-आज़म के स्मारक, जन्मस्थल, घर और गांव में नायक का अस्तित्व तलाशते नजर आए। तलवंडी सलेम स्थित पाश के घर पहुंचे तो राहुल ने उस गाँव की मिट्टी को झुक कर नमन किया। सभी जगहों से मिले सम्मान ने उन्हें इस भूमि की विरासत से जोड़ दिया। अपनी डायरी में अपने विचार लिखते हुए, तथा मराठी में अपने साथियों से बात करते हुए, वह हमारे साथ पूरा दिन बिताते थे। शाम को घर लौटते ही वे हमें अपने राज्य में चल रहे चेतना आंदोलन के प्रेरक अंश सुनाना शुरू कर देते थे। वे पंजाब से सुखद अनुभूति लेकर लौटे।

मुझे पुणे में आयोजित राष्ट्रीय सामाजिक एवं साहित्यिक महोत्सव में जाने का अवसर मिला। राहुल थोरात हमारा इंतजार कर रहे थे। वह तीन दिन तक हमारे साथ छाया की तरह रहे। उन्होंने हमारी हर ज़रूरत का ध्यान रखा, हमें दोस्तों से मिलवाया और एक मार्गदर्शक की तरह काम किया। पहले ही दिन वह हमें पुणे में महात्मा फुले वाड़ा दिखाने ले गए। उन्होंने हमें महाराष्ट्र के प्रमुख महात्मा ज्योतिरायो फुले द्वारा शिक्षा और समाज के लिए किए गए महान कार्यों के बारे में गर्व से बताया। लेखन, पठन और सामाजिक चेतना का कार्य ही उनका जीवन कार्य है। हम उनके साथ पुणे से सांगली स्थित पत्रिका के मुख्यालय तक जाते हैं। वह हर समय संगठन के लिए काम करता है। वह हमें पत्रिका के सभी अंक दिखाता है। कार्यालय में संग्रहीत ज्ञान, हमें मराठी साहित्य के बारे में बताता है। वह हमें पत्रिका की रजत जयंती और विभिन्न विषयों पर छपे साहित्य के बारे में बताते हैं।

राहुल का घर उसके काम से अलग नहीं है। उनका रात्रि आश्रय पत्रिका कार्यालय के ठीक ऊपर है। वे जहां भी बैठते हैं, जनचेतना के लिए विचार विसर्जित करते हैं। वह निर्मूलन समिति नामक एक बड़े जन आधार वाले संगठन के लिए कई परियोजनाओं पर काम करते हैं। संगठन ने उन्हें ज्ञान विज्ञान वाहिनी का कार्य सौंपा है, जो मराठी गांवों में अंधविश्वास के अंधकार को दूर करने तथा कर्म और कांड के भ्रम को दूर करने के लिए जाती है। उनके मन में एक भ्रम-मुक्त, समान समाज का सपना है। वह इस कार्य से कभी नहीं थकते। उसकी अपनी जरूरतें सीमित हैं, लेकिन काम का दायरा असीमित है। इस कठिन रास्ते पर चलते हुए, वे विनम्रतापूर्वक कहते हैं, यह डॉ. दाभोलकर के त्याग और बलिदान के कारण है।

अपने कार्यालय में बैठकर वह कलम और कला के माध्यम से जन चेतना का महान कार्य करते हैं। राहुल कहते हैं, यह कलम की ताकत है जिन सांप्रदायिक ताकतों ने हमसे डॉ. दाभोलकर को छीना, उनकी आशाएं पूरी नहीं होगी। डॉ. नरेन्द्र दाभोलकर हर दम हमारे साथ हैं। यह उनके विचारों और आदर्शों की शक्ति है। यही हमारी एकजुटता और आगे बढ़ते रहने की इच्छा का कारण है। वैज्ञानिक चेतना से भ्रम मुक्त समाज और समान अवसर की ओर यात्रा लगातार जारी है।

पृष्ठ 34 का शेष

अपने दोस्तों के साथ नाचने लगी। भला एक भारतीय पति को यह कैसे सहन होता? लिहाजा बातों-बातों में पति-पत्नी में कहासुनी हो गई। नतीजा यह हुआ कि उस डाक्टर पति ने अपनी नवविवाहिता पत्नी की बड़ी निर्ममतापूर्वक हत्या कर दी।

उपर्युक्त उदाहरणों से साफ जाहिर होता है कि ये घटनाएं संस्कारों के टकराव के कारण हुई। अत: लड़की के लिए वर की जन्मपत्री मिलाना अब जरूरी नहीं रह गया है। अब तो सब से पहला काम लड़के-लड़की के संस्कार मिलाने का होना चाहिए। जो आवश्यक भी है। कहीं विपरीत संस्कार आप की लड़की के लिए अभिशाप न बन जाएं।

शहीद नहीं, सवाल है

(पहलगाम की घाटी से – एक मज़दूर की आवाज़)

–एम के आज़ाद

वो कोई नेता नहीं था,
न कोई अफ़सर, न सेठ, न मालिक–
वो एक आदमी था,
जिसकी हथेलियाँ सर्दियों में फटती थीं,
जिसकी जेबें खाली थीं,
मगर दिल समुंदर था।

वो घोड़े की लगाम थामे
पहलगाम की घाटियों में
परायों को अपनापन देता था–
कश्मीर के मेहमानों को
अपने कंधों पर बिठाकर
इस मुल्क की मेहमाननवाज़ी निभाता था।

पहलगाम में गोलियाँ चलीं,
और साथ ही चल पड़ा एक स्क्रिप्टेड नैरेटिव–
कहा गया- मर्दों को सिर में मारा गया,
औरतों को छोड़ दिया गया,
ताकि वे लौटें और कहें–
''धर्म पूछा गया था,''
''पहचान देखी गई थी,''
''मौत चुन-चुनकर बाँटी गई थी।''

पर ज़रा ठहरो–
टूरिस्ट खुद कह रहे हैं–
हमला अचानक था,
कोई नाम नहीं पूछा गया,
ना कोई धर्म, ना कोई जात।
बस छिपकर चली गोलियाँ,
जैसे डर को हवा दी जा रही हो।

तो क्या ये कथित नैरेटिव
गोली चलने के बाद
किसी के फायदे के लिए सेट एजेंडा था?
टीवी पर बैठे एंकर
क्या मिनटों में तय कर लिया था–
''ये धर्म पर हमला है''
क्योंकि उनके लिए
खून बहता है, तो ञत्रक्क बढ़ती है,
मौतें आती हैं, तो वोटों की फ़सल तैयार होती है!

उस दिन पहलगाम के कई घोड़े वाले ने कुछ नहीं पूछा–
न नाम, न जात, न धर्म।
बस लगाम खींची,
और मौत से तेज़ भाग पड़े,
सैलानियों की जान बचाते हुए।

कितनी तेज़ होती है जि़न्दगी
जब मौत पीछा कर रही हो–
और कितनी सस्ती होती है जान
जब राजनीति खबर बुन रही हो।

उसी दिन एक होटल वाला,
जिसने कहा–
''पैसे बाद में, पहले तुम ठीक रहो''
एक ड्राइवर,
जो रोते हुए चुपचाप चला गया
बिना किराया लिए।

पर वहीं कुछ और भी था–
श्रीनगर से दिल्ली की फ्लाइट
दो टिकट के 38 हज़ार,
क्योंकि मुसीबत में
पैसेवाले हमेशा कीमत बढ़ाते हैं
और नेता–मुनाफा।

उसी दिन पहाड़ों के बीच,
जहाँ सत्ता की बंदूकें मौन थीं,
वहाँ खड़ा था सैयद हुसैन शाह
गोलियों के सामने, सीना ताने–

''ये मासूम हैं'', उसने कहा
''मेहमान हैं, इन्हें मत मारो!''

उसने एक आतंकी से भिड़कर
राइफल छीननी चाही–
नफ़रत की नली मोड़नी चाही–
और गिर पड़ा।
गोली खाकर,
पर शर्मिंदा नहीं।

पर सवाल ये है–
इतनी सुरक्षा के बावजूद
आतंकी आए कैसे?
इंटेलिजेंस कहाँ थी?
या फिर किसी साजिस के तहत
जान–बूझकर दरारें उगाई गईं?

क्योंकि जब गोलियाँ चलती हैं,
तो टीवी पर बहस चलती है
हिन्दू–मुस्लिम नफरती नरेटिव चलती है
और हमारे बच्चों की फीस की बात दबा दी जाती है
हमारे गाँव की सड़क, अस्पताल, राशन
सब धर्म की बहस में खो जाते हैं।

हमारे दु:खों का रंग न हिन्दू है, न मुसलमान
वो रंग है– धूल का, पसीने का,
जिसे तुम नफरत से धो नहीं सकते।

पर अख़बार क्या बताएगा?
टीवी क्या दिखाएगा?
हुसैन शाह का नाम
या उस जैसे जिंदगी बचते हुए
घोड़े वाले का नाम,
ट्रेंड नहीं बनेगा
क्योंकि उसका धर्म
'हक़ के लिए खड़ा होना' था,
और उसकी जात
'मेहनतकश' थी।

कितनी सदी लगती है
एक मज़दूर को इंसान कहने में?
वो जो अपनी पीठ पर
तुम्हारे सपनों की सैर ढोता है
वो जो हर सीज़न के साथ
अपनी जन्दिगी की जड़ें काटता है
वो जो गोली खाकर भी
इंसानियत का झंडा गाड़ देता है।

हुसैन शाह ने बंदूक से भिड़कर
हमें याद दिलाया–
कि बहादुरी वर्दी में नहीं होती,
धर्म में नहीं, न पार्टी में–
वो होती है उस घोड़े वाले में
जिसकी जेबें ख़ाली थीं
पर दिल समुंदर था।

तो पूछो–
सैयद हुसैन शाह कौन था?
वो 'धार्मिक पहचान' नहीं,
वो 'सत्ता का पैरोकार' नहीं–
वो हमारी जात का था–
हम मज़दूरों की बिरादरी का।

अख़बार चुप रहेगा।
टीवी उसे भूल जाएगा।
क्योंकि उसका नाम
वोट बैंक नहीं बनेगा।
पर हम याद रखेंगे–

कि जब–जब गोलियाँ चलेंगी,
हुसैन शाह की परछाईं उठेगी–
हमसे पूछेगी–
''इंसान पहले कौन था?''
और हम जवाब देंगे–
''हम थे। हम हैं। हम रहेंगे।''

*****

कैलेंडर कैसे बने..?

- हरचंद भिंडर

आज जो घटित हो रहा है, वह कल इतिहास बन जाएगा। समय चलता रहता है। प्राचीन काल से ही विभिन्न सभ्यताओं ने इस समय को मापने के लिए पैमाने बनाए हैं, जैसे कि भारत में आर्य सभ्यता के आगमन के दौरान या वेदों के समय दूसरे शब्दों में, पाषाण युग के बाद, कांस्य युग में चंद्र-आधारित कैलेंडर अस्तित्व में आया; क्योंकि सूर्य के उदय होने पर दिन शुरू होता था और उसके अस्त होने पर रात होती थी। इन लोगों के अनुसार, इससे कोई दीर्घकालिक लाभ नहीं हो सकता था दूसरी ओर, चाँद रात में दिखाई देता था और हर दिन वह आकार में नये परिवर्तन के साथ तारों के बीच दिखाई देता था। करीब से निरीक्षण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि चंद्रमा हर रात तारों वाले आकाश में एक नया स्थान ग्रहण करता है। इस जानकारी के आधार पर इन तारों और तारा समूहों का नामकरण किया गया ताकि उन्हें पहचानना आसान हो सके। फिर, जिस तारे या नक्षत्र के निकट चंद्रमा दिखाई देता था, उसके आधार पर दिन का नाम रखा गया, अर्थात उस दिन का नक्षत्र उस तारे के नाम पर आधारित माना गया जिसके निकट चंद्रमा दिखाई देता था। उदाहरण के लिए, कृतिका तारामंडल के निकट होने के कारण इस दिन को कृतिका नक्षत्र के नाम से जाना जाता था। लगभग 3800 वर्ष पूर्व कृतिका नक्षत्र को प्रथम नक्षत्र माना जाता था। इस प्रकार चन्द्रमा के पथ सहित आकाश की गणना नक्षत्रों के आधार पर की गई, जो प्रारम्भ में 28 थे जिनमें अभिजित भी शामिल था (अथर्ववेद में नक्षत्रों की संख्या 28 है, जिसमें कृतिका को प्रथम माना गया है, जो सूक्त 7 व 8 में है।) किन्तु बाद में राशिचक्र (सौर) कैलेंडर के साथ संरेखित कर गणना का सरलीकरण करने के कारण 27 नक्षत्र ही रह गए तथा वेगा को बाहर कर दिया गया। इस रास्ते पर चलते हुए चाँद हर दिन अपना रंग बदलता रहता। यह चक्र पूर्णिमा से पूर्णिमा या अमावस्या से अमावस्या तक 30 दिनों में पूरा होता प्रतीत होता था। ऐसे बारह चक्रों के बाद, चंद्रमा पहले तारों या नक्षत्रों के पास पहुंच जाएगा। इस प्रकार 12 महीनों का एक वर्ष 360 दिन का हो गया। लेकिन बाद में यह देखा गया कि 12वें पूर्णिमा के बाद, चंद्रमा फिर से पहले पूर्णिमा के तारों से थोड़ा अलग हो जाएगा। इसके आधार पर जब उन्होंने समय को वर्षों में विभाजित किया तो पाया कि समय 360 दिनों के बजाय 354 दिन था, जो कि 6 दिनों का अंतर था। इसके कारण, चंद्रमा का वास्तविक चक्र साढ़े 29 दिन का निर्धारित किया गया और एक दिन बाद को तिथि कहा जाने लगा। बाद में सौर वर्ष, जो 365 दिन का था, के बीच वास्तविक अंतर 11 दिन का हो गया, जिसके कारण तीसरे वर्ष में एक चंद्र मास जोड़ दिया गया। जिसके कारण इसे सौर कैलेंडर के बराबर करने के लिए इसमें 'मल मास' का एक महीना जोड़ा गया।

भारत में, विशेषकर उत्तर भारत में, दो संवत हैं- एक है विक्रमी संवत। जो चन्द्र-सौर प्रणाली पर आधारित है तथा 57 ईसा पूर्व से प्रारम्भ हुआ था और दूसरा शक संवत जो केवल सौर प्रणाली पर आधारित है तथा 78 ईस्वी में प्रारम्भ हुआ था। बाद में इस शक संवत को 1957 में संशोधित कर राष्ट्रीय कैलेण्डर बना दिया गया और इसके 5 महीने (लेकिन लीप वर्ष में चेत के केवल 31 दिन होते हैं) बैसाख, जेठ, हार, सावन और भादों प्रत्येक 31 दिन के तथा शेष महीने 30-30 दिन के कर दिए गए। इसकी शुरुआत 22 मार्च को प्रथम चेत्र से होती है तथा लीप वर्ष में यह 21 मार्च को होती है। लेकिन पारंपरिक शशक संवत की शुरुआत सूर्य के प्रथम राशि मेघना में प्रवेश करने के समय से होती है, अर्थात एक बैसाख को। पूरे भारत में चार सौर कैलेंडर स्कूल संचालित हैं-उड़ीसा, बंगाल, तमिल और मलयाली स्कूल। उड़ीसा स्कूल के अनुसार, जिसे न केवल उड़ीसा बल्कि पंजाब और हरियाणा में भी अपनाया गया है, महीना तब शुरू होता है जब सूर्य एक नई राशि में प्रवेश करता है। बंगाली, जो बंगाल के अलावा असम और त्रिपुरा में भी अपनाई जाती है, तमिल, जो केवल तमिलनाडु में अपनाई जाती है, और मलयाली, जो केवल केरल में अपनाई जाती है।

लेकिन विक्रमी संवत, जो अधिक प्रचलित है, चंद्र और सौर सिद्धांतों पर आधारित है। आजकल इसे 'हिन्दू कैलेंडर' कहा जाता है। इसके साथ ही हिंदू त्यौहार और मेले भी मनाए जाते हैं। इसके सौर सिद्धांत पर आधारित कैलेंडर डायरियाँ पंजाबी में मुद्रित पाई जाती हैं। यह चैत्र मास के प्रथम दिन या फागुन माह के बाद प्रथम नवरात्रि से शुरू होता है। महीनों के नाम नक्षत्रों पर आधारित हैं, अर्थात महीने का नाम उस नक्षत्र के नाम पर रखा गया है जिसके निकट शुभ दिन पर चंद्रमा होता है। इस माह से जुड़ा एक नियम यह भी है कि इस माह में संग्रांद होना जरूरी है। यदि संग्रांद न हो तो माह को नामहीन या 'मल मास' माना जाता है। यदि दो संग्रान्दाएँ आती हैं, तो पहले संग्रान्द को एक मास के रूप में गिना जाता है, तथा दूसरे संग्रान्द को एक खाया मास माना जाता है। चन्द्र तिथियों को तिथि कहा जाता है और सौर तिथियों को प्रविष्ट कहा जाता

है तथा सौर तिथि सूर्योदय से शुरू होती है। ज्योतिषियों का व्यवसाय इसी कैलेंडर के आधार पर चलता है।

संक्रांति 23 सितंबर के बजाय 24 दिन बाद 17 अक्टूबर को पड़ती है, जो कि कार्तिक महीने की संक्रांति का दिन बनता है। यहां यह भी ध्यान रखना जरूरी है कि ग्रेगोरियन कैलेंडर सौर वर्ष के हिसाब से पूरी तरह सटीक नहीं है। एक और हालिया अंतर जो आप देख सकते हैं वह यह है कि माघ संग्रांद (मकर संक्रांति), जो पहले 13 जनवरी को पड़ती थी, अब 14 जनवरी को पड़ती है। इसी तरह बैसाखी की तिथि भी बदल रही है और कभी-कभी यह 14 अप्रैल को पड़ रही है। क्योंकि भारतीय समयानुसार सूर्य आज भी रात्रि में मीन राशि में प्रवेश करता है।

और ओडिशा मॉडल कैलेंडर का सिद्धांत यह है कि सूर्योदय से लेकर अगले दिन के सूर्योदय तक का दिन एक ही तिथि माना जाता है। इस कारण बैसाखी अभी भी 13 अप्रैल को आ रही है। दूसरी ओर, जो लोग 'हिंदू कैलेंडर' का पालन करते हैं, वे उस दिन को सक्रांति के रूप में मानते हैं जब सूर्य नई राशि में दिखाई देता है। अब अगर हम ऐतिहासिक दृष्टि से देखें या लिखें तो जलियांवाला बाग की घटना 13 अप्रैल 1919 को घटित हुई थी और वह दिन बैसाखी की संक्रांति भी था। अब आजकल यह दिन अंग्रेजी महीने की तिथि के अनुसार 13 अप्रैल को पड़ता है और विक्रमी कैलेंडर की तिथि बैसाखी संक्रांति के दिन पड़ती है जो कभी 13 अप्रैल को होती है तो कभी 14 अप्रैल को और इस सदी के अंत तक यानी 2100 में यह 15 अप्रैल को पड़ेगी। क्योंकि वर्ष 2100 लीप वर्ष नहीं है। इसके परिणामस्वरूप एक दिन की वृद्धि होगी।

दूसरा अंतर जूलियन कैलेंडर के संशोधन में ग्रेगोरियन कैलेंडर का कार्यान्वयन है। जूलियन कैलेंडर की लंबाई 365.25 दिन है, जबकि ग्रेगोरियन कैलेंडर की लंबाई 365.2425 दिन है। इस प्रकार, जूलियन कैलेंडर ग्रेगोरियन कैलेंडर से .0075 दिन पुराना है, अर्थात 400 वर्षों में 3 दिन का अंतर। इस कारण से, कैथोलिक देशों में ग्रेगोरियन कैलेंडर को 10 दिन बढ़ाकर 1582 में लागू किया गया, जो 4 अक्टूबर से शुरू होकर 15 अक्टूबर तक जारी रहा। लेकिन इंग्लैंड और उसके आश्रित देशों ने 1752 को 11 दिन बढ़ाकर 2 सितंबर से शुरू करके 14 सितंबर को समाप्त कर दिया। इसके बाद इसे धीरे-धीरे लगभग सभी देशों में लागू किया गया, चीन, बुल्गारिया, रूस, तुर्की आदि ने इसे 20वीं सदी में अपनाया और सऊदी अरब ने अब 2016 में। यह अंतर अब 13 दिनों का है क्योंकि 2000 एक लीप वर्ष है, जिसका अर्थ है कि 10 दिसंबर, 2024, जूलियन कैलेंडर के अनुसार 27 नवंबर, 2024 हो जाता है।

यदि अब हम पंजाब के ऐतिहासिक दृष्टिकोण से समझें तो गुरु नानक देव जी की जन्म तिथि 15 अप्रैल 1469 जूलियन है, अत: इसमें 9 दिन जोड़ने पर यह ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 24 अप्रैल हो जाएगी। अब अगर इसे विक्रमी कैलेंडर के अनुसार देखें तो यह 20 बैसाख 1526 वैसाख सुदी, 3 दिन शनिवार बनता है। अगर हम 1699 में बैसाखी की बात करें तो यह जूलियन कैलेंडर के अनुसार 30 मार्च को और ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 9 अप्रैल को होगी। इसी प्रकार, गुरु तेग बहादुर जी का शहीदी दिवस जूलियन कैलेंडर के अनुसार 11 नवंबर, 1675 है और ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 21 नवंबर, 1675 होगा क्योंकि 1600 ई. ग्रेगोरियन लीप वर्ष है। लेकिन अगर हम 11 नवम्बर को आज के समय में जूलियन से ग्रेगोरियन में बदलें तो यह 13 दिनों के अंतर के साथ 24 नवम्बर हो जाएगी। इसके अलावा, महाराष्ट्र में शिवाजी का जन्म जूलियन कैलेंडर के अनुसार 19 फरवरी 1630 को हुआ था, लेकिन ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 1 मार्च 1630 को हुआ था। इसका कारण यह है कि हमारे वर्तमान इतिहासकार जूलियन और ग्रेगोरियन कैलेंडर के बीच अंतर नहीं समझते हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि विकर्मी कैलेंडर ॠतुओं के अनुरूप नहीं है तथा इसका प्रयोग केवल राशियों के बारे में जानकारी की आवश्यकता के कारण ज्योतिषीय दृष्टिकोण से किया जा रहा है। लेकिन पाश्चात्य ज्योतिष में, राशि चक्र का पहला चिह्न मेष, 21 मार्च से शुरू होता है। यह सच है कि ग्रेगोरियन कैलेंडर सौर कैलेंडर से भी पुराना है। लगभग 3200 ई. के बाद यह बड़ा हो जायेगा। लेकिन इसमें भी सुधार की गुंजाइश है, क्योंकि 19वीं शताब्दी में खगोलशास्त्री सर जॉन हर्शेल ने प्रस्तावित किया था कि वर्ष 4000 को लीप वर्ष नहीं माना जाना चाहिए, और फिर वर्ष 8000 को भी लीप वर्ष नहीं माना जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि 4000 से विभाज्य लीप वर्षों पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रकार, 4000 वर्षों में 970 के स्थान पर 969 लीप दिवस माने जाने चाहिए।

पंजाब के इतिहास के उपरोक्त उदाहरण पंजाबी विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तकों सिख इतिहास और जन्म साखी परंपरा से उपलब्ध हैं और शिव जी से संबंधित जानकारी नेट पर उपलब्ध है। इसके साथ ही पुस्तक EXPLANATORY SUPPLEMENT TO THE EFEMERIS के पृष्ठों की फोटोकॉपी भी है, जो जूलियन और ग्रेगोरियन है। यह ग्रन्थ इनके अलावा अन्य पुस्तकों जैसे आकाश दर्शन और भारतीय पंचांग प्रणाली पर आधारित है।

संक्रांति 23 सितंबर के बजाय 24 दिन बाद 17 अक्टूबर को पड़ती है, जो कि कार्तिक महीने की संक्रांति का दिन बनता है। यहां यह भी ध्यान रखना जरूरी है कि ग्रेगोरियन कैलेंडर सौर वर्ष के हिसाब से पूरी तरह सटीक नहीं है। एक और हालिया अंतर जो आप देख सकते हैं वह यह है कि माघ संग्रांद (मकर संक्रांति), जो पहले 13 जनवरी को पड़ती थी, अब 14 जनवरी को पड़ती है। इसी तरह बैसाखी की तिथि भी बदल रही है और कभी-कभी यह 14 अप्रैल को पड़ रही है। क्योंकि भारतीय समयानुसार सूर्य आज भी रात्रि में मीन राशि में प्रवेश करता है।

और ओडिशा मॉडल कैलेंडर का सिद्धांत यह है कि सूर्योदय से लेकर अगले दिन के सूर्योदय तक का दिन एक ही तिथि माना जाता है। इस कारण बैसाखी अभी भी 13 अप्रैल को आ रही है। दूसरी ओर, जो लोग 'हिंदू कैलेंडर' का पालन करते हैं, वे उस दिन को सक्रांति के रूप में मानते हैं जब सूर्य नई राशि में दिखाई देता है। अब अगर हम ऐतिहासिक दृष्टि से देखें या लिखें तो जलियांवाला बाग की घटना 13 अप्रैल 1919 को घटित हुई थी और वह दिन बैसाखी की संक्रांति भी था। अब आजकल यह दिन अंग्रेजी महीने की तिथि के अनुसार 13 अप्रैल को पड़ता है और विक्रमी कैलेंडर की तिथि बैसाखी संक्रांति के दिन पड़ती है जो कभी 13 अप्रैल को होती है तो कभी 14 अप्रैल को और इस सदी के अंत तक यानी 2100 में यह 15 अप्रैल को पड़ेगी। क्योंकि वर्ष 2100 लीप वर्ष नहीं है। इसके परिणामस्वरूप एक दिन की वृद्धि होगी।

दूसरा अंतर जूलियन कैलेंडर के संशोधन में ग्रेगोरियन कैलेंडर का कार्यान्वयन है। जूलियन कैलेंडर की लंबाई 365.25 दिन है, जबकि ग्रेगोरियन कैलेंडर की लंबाई 365.2425 दिन है। इस प्रकार, जूलियन कैलेंडर ग्रेगोरियन कैलेंडर से .0075 दिन पुराना है, अर्थात 400 वर्षों में 3 दिन का अंतर। इस कारण से, कैथोलिक देशों में ग्रेगोरियन कैलेंडर को 10 दिन बढ़ाकर 1582 में लागू किया गया, जो 4 अक्टूबर से शुरू होकर 15 अक्टूबर तक जारी रहा। लेकिन इंग्लैंड और उसके आश्रित देशों ने 1752 को 11 दिन बढ़ाकर 2 सितंबर से शुरू करके 14 सितंबर को समाप्त कर दिया। इसके बाद इसे धीरे-धीरे लगभग सभी देशों में लागू किया गया, चीन, बुल्गारिया, रूस, तुर्की आदि ने इसे 20वीं सदी में अपनाया और सऊदी अरब ने अब 2016 में। यह अंतर अब 13 दिनों का है क्योंकि 2000 एक लीप वर्ष है, जिसका अर्थ है कि 10 दिसंबर, 2024, जूलियन कैलेंडर के अनुसार 27 नवंबर, 2024 हो जाता है।

यदि अब हम पंजाब के ऐतिहासिक दृष्टिकोण से समझें तो गुरु नानक देव जी की जन्म तिथि 15 अप्रैल 1469 जूलियन है, अतः इसमें 9 दिन जोड़ने पर यह ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 24 अप्रैल हो जाएगी। अब अगर इसे विक्रमी कैलेंडर के अनुसार देखें तो यह 20 बैसाख 1526 वैसाख सुदी, 3 दिन शनिवार बनता है। अगर हम 1699 में बैसाखी की बात करें तो यह जूलियन कैलेंडर के अनुसार 30 मार्च को और ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 9 अप्रैल को होगी। इसी प्रकार, गुरु तेग बहादुर जी का शहीदी दिवस जूलियन कैलेंडर के अनुसार 11 नवंबर, 1675 है और ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 21 नवंबर, 1675 होगा क्योंकि 1600 ई. ग्रेगोरियन लीप वर्ष है। लेकिन अगर हम 11 नवम्बर को आज के समय में जूलियन से ग्रेगोरियन में बदलें तो यह 13 दिनों के अंतर के साथ 24 नवम्बर हो जाएगी। इसके अलावा, महाराष्ट्र में शिवाजी का जन्म जूलियन कैलेंडर के अनुसार 19 फरवरी 1630 को हुआ था, लेकिन ग्रेगोरियन कैलेंडर के अनुसार 1 मार्च 1630 को हुआ था। इसका कारण यह है कि हमारे वर्तमान इतिहासकार जूलियन और ग्रेगोरियन कैलेंडर के बीच अंतर नहीं समझते हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि विकर्मी कैलेंडर ऋतुओं के अनुरूप नहीं है तथा इसका प्रयोग केवल राशियों के बारे में जानकारी की आवश्यकता के कारण ज्योतिषीय दृष्टिकोण से किया जा रहा है। लेकिन पाश्चात्य ज्योतिष में, राशि चक्र का पहला चिह्न मेष, 21 मार्च से शुरू होता है। यह सच है कि ग्रेगोरियन कैलेंडर सौर कैलेंडर से भी पुराना है। लगभग 3200 ई. के बाद यह बड़ा हो जायेगा। लेकिन इसमें भी सुधार की गुंजाइश है, क्योंकि 19वीं शताब्दी में खगोलशास्त्री सर जॉन हर्शेल ने प्रस्तावित किया था कि वर्ष 4000 को लीप वर्ष नहीं माना जाना चाहिए, और फिर वर्ष 8000 को भी लीप वर्ष नहीं माना जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि 4000 से विभाज्य लीप वर्षों पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रकार, 4000 वर्षों में 970 के स्थान पर 969 लीप दिवस माने जाने चाहिए।

पंजाब के इतिहास के उपरोक्त उदाहरण पंजाबी विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तकों सिख इतिहास और जन्म साखी परंपरा से उपलब्ध हैं और शिव जी से संबंधित जानकारी नेट पर उपलब्ध है। इसके साथ ही पुस्तक EXPLANATORY SUPPLEMENT TO THE EFEMERIS के पृष्ठों की फोटोकॉपी भी है, जो जूलियन और ग्रेगोरियन है। यह ग्रन्थ इनके अलावा अन्य पुस्तकों जैसे आकाश दर्शन और भारतीय पंचांग प्रणाली पर आधारित है

अनुवाद : गुरमीत अंबाला

दो दिवसीय प्रांतीय प्रतिनिधि सम्मेलन

- सुमीत अमृतसर

समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, तथाकथित चमत्कारों, पाखंडी बाबायों, सामाजिक बुराइयों और तमाम तरह की अवैज्ञानिक घटनाओं के खिलाफ वैज्ञानिक जागरूकता को बढ़ावा देने और प्रसारित करने के अलावा, जन-हितैषी, सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव के लिए पिछले 41 वर्षों से लगातार संघर्ष कर रही तर्कशील सोसायटी पंजाब का दो दिवसीय प्रांतीय प्रतिनिधि सम्मेलन 5-6 अप्रैल को तर्कशील भवन, बरनाला में हुआ। जिसमें पंजाब के 10 जोनों की 50 इकाइयों से 148 प्रतिनिधियों व दर्शकों ने भाग लिया।

पंजाब के कोने-कोने से आए सभी प्रतिनिधियों और दर्शकों के पंजीकरण और चाय-पानी के पश्चात पहले सत्र की नियमित शुरुआत से पहले तर्कशील साथी अजमेर अकलिया, मनजीत घणगस, राम सिंह निर्माण चुघे कलां और सुखविंदर खारा द्वारा क्रांतिकारी गीत और प्रगतिशील कविताएँ पेश की गईं।

सम्मेलन के उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि एवं मुख्य वक्ता प्रख्यात लोकतांत्रिक चिंतक एवं सामाजिक कार्यकर्ता हिमांशु कुमार ने 'वर्तमान युग में फासीवाद की चुनौतियाँ और हमारा कार्य' विषय पर अपने विचार सांझा करते हुए कहा कि मोदी सरकार की '31 मार्च 2026 तक नक्सलवाद को समाप्त करने' की नीति जनता के मूलभूत मुद्दों को हल करने की बजाय, तथाकथित आर्थिक विकास की आड़ में, कॉरपोरेट परियोजनाओं के लिए रास्ता साफ करने की फासीवादी नीति चल रही है। जिसके तहत मूल निवासियों को विस्थापित किया जा रहा है। उनका नरसंहार किया जा रहा है और उनके जल, जंगल, जमीन और खनिजों की लूट की जा रही है, जिसका खामियाजा आम लोगों को भुगतना पड़ रहा है। इसका बुनियादी विकास से कोई लेना-देना नहीं है। उन्होंने आरोप लगाया कि बस्तर क्षेत्र में सुरक्षा बलों द्वारा मुठभेड़ों की आड़ में लगातार आम लोगों की हत्याएं की जा रही हैं। जिनमें बड़ी संख्या में आदिवासी महिलाएँ और बच्चे भी शामिल हैं। उन्होंने कहा कि पूंजीवाद का अगला हमला किसानों और उनकी जमीनों पर कब्जा करने का होगा तथा बड़ी संख्या में लोगों को बेरोजगार कर दिया जाएगा। उन्होंने तर्कशील सोसाइटी और सभी लोकतांत्रिक व न्यायप्रिय जागरूक लोगों से साम्राज्यवादी शासकों की इन योजनाओं व नरसंहारों के खिलाफ आवाज उठाने की पुरजोर अपील की। इस अवसर पर प्रांतीय संगठन प्रमुख मास्टर राजेंद्र भदौड़ ने मुख्य वक्ता हिमांशु कुमार और पंजाब की सभी इकाइयों से आए प्रतिनिधियों और श्रोताओं का स्वागत किया।

दूसरे सत्र में 13 विभागों की पिछले दो वर्षों की समीक्षा रिपोर्टों पर मास्टर परमवेद संगरूर, हरचंद भिंडर, सुखदेव फगवाड़ा, सुरजीत टिब्बा, जसवन्त जीरख, गुरुमीत खरड़, राम कुमार पटियाला, बलबीर लोंगोवाल, भूरा सिंह महिमा सरजा, जुझार लोंगोवाल, सतपाल सलोह, गगन सहित विभिन्न जोनों और इकाइयों के प्रतिनिधियों द्वारा चर्चा की गई। रामपुरा, मास्टर जगदीश रायपुर डिब्बा, संदीप धारीवाल भोजा, जसविंदर फगवाड़ा, जसवन्त मोहाली, सुखविंदर बागपुर, राम स्वर्ण लक्खेवाली, हेम राज स्टेनो, मुख्तियार गोपालपुर, कुलविंदर नगारी, कुलवंत कौर, राम सिंह निर्माण, जोगिंदर कुल्लेवाल, धर्मपाल सिंह, डॉ. मजीद आज़ाद, सुखविंदर बागपुर, विश्व कांत सुनाम, जसपाल बसरके, दीप दिलबर, लाभ सिंह छाजली, देविंदर सिंह, अमृत ऋषि, प्रिं. मनजीत सिंह शाहकोट, परमजीत कीर्ति, कप्तान सिंह, सोहन सिंह माझी, संदीप कुमार दर्दी, जिंदर बागपुर, मोहन बठला, सुरिंदर पद्दीजगीर आदि ने रचनात्मक चर्चा की तथा सभी विभागों के प्रदर्शन को ओर बेहतर बनाने पर जोर दिया।

समीक्षा रिपोर्ट के संबंध में 13 विभागों के प्रांतीय प्रमुखों ने पिछले सत्र में प्रतिनिधियों की कमियों, कमजोरियों, आपत्तियों और सुझावों पर अपने विचार व्यक्त किए तथा जन-हितैषी वैज्ञानिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन पर अपने विचार व्यक्त किए। इकाइयों एवं जोनों में निरंतर प्रशिक्षण, कार्यशालाओं एवं संगोष्ठियों के माध्यम से अधिक सक्रिय करना, अधिक से अधिक महिलाओं, विद्यार्थियों, युवाओं को

शामिल करके समाज के दायरे को अधिक विस्तारित करना तथा मौजूदा व्यवस्था को मजबूत करना शामिल था। फासीवादी दौर की चुनौतियों का डटकर मुकाबला करने के साथ-साथ इस बात पर जोर दिया गया कि राज्य कार्यकारिणी के निर्णयों और कार्ययोजनाओं को इकाई स्तर पर लागू करने के लिए प्रांतीय और जोन नेताओं द्वारा लगातार विशेष प्रयास किए जाने चाहिए।

तृतीय सत्र में हिन्दी तर्कशील पत्रिका के लिए अलग से संपादक बनाने तथा सम्पादकिय मण्डल मनोनीत करने पर विचार की गई। तर्कशील भवन के सुचारू संचालन हेतु कार्यालय सचिव का पद स्थापित करने के लिए भी सभी ने सहमति दी। तर्कशील सोसायटी के पंजाब के संविधान में संशोधन करने के लिए संवैधानिक संशोधनों का एजेंडा पेश किया गया, जिसे सभी प्रतिनिधियों द्वारा सर्वसम्मति से पारित किया गया।

अधिवेशन के दूसरे दिन के प्रथम सत्र में विभिन्न प्रतिनिधियों ने विद्यार्थी चेतना परीक्षा एवं तर्कशील पत्रिकाओं की संख्या बढ़ाने, परीक्षा के पाठ्यक्रम में बदलाव करने, इसे सरल बनाने जैसे महत्वपूर्ण एजेंडों पर अपने विचार सांझा किए। इसे ओर अधिक रोचक एवं ज्ञानवर्धक बनाने के साथ-साथ अधिक से अधिक विद्यार्थियों को शामिल करने पर अपने अपने विचार दिए। तर्कशील पत्रिकाओं की संख्या बढ़ाने के लिए प्रत्येक वर्ष एक निश्चित माह में विशेष अभियान चलाने की आवश्यकता पर बल दिया गया ।

दूसरे सत्र में आगामी दो वर्षों की कार्ययोजना पर चर्चा करते हुए तर्कशील साहित्य वैन का वार्षिक कार्यक्रम बनाने, तर्कशील पत्रिकाओं की संख्या बढ़ाने, छात्र चेतना परीक्षा में सभी इकाइयों की भागीदारी सुनिश्चित करने तथा तर्कशील टीवी, कानून विभाग और सोशल मीडिया विभाग को अधिक सहयोग प्रदान करने का निर्णय लिया गया। सक्रियता के अलावा इकाई स्तरीय बैठकों, पारिवारिक मिलन समारोह, शिक्षक मिलन समारोह, जागरूकता संगोष्ठियों तथा प्रशिक्षण कार्यशालाओं की निरन्तरता बनाए रखने के क्षेत्रों में और अधिक सक्रियता बरतने की आवश्यकता पर बल दिया गया। इसके अलावा पंजाब सहित पूरे देश में धार्मिक कट्टरवाद की राजनीति करने वाली सांप्रदायिक फासीवादी ताकतों द्वारा वैज्ञानिक विचारधारा और तर्कपूर्ण संस्थाओं पर हमले और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर लगाए जा रहे प्रतिबंधों का मुकाबला करने के लिए समान विचारधारा वाले और जन-समर्थक लोकतांत्रिक जन संगठनों के साथ संयुक्त गतिविधियों की आवश्यकता पर भी बल दिया गया। तीसरे और अंतिम सत्र में अगले दो वर्षों के लिए 15 सदस्यीय नई राज्य कार्यकारिणी का चुनाव किया गया।

इस अवसर पर बलराज मौड़ , ज्ञान सिंह, मास्टर लक्खा सिंह मानसा, जसवंत जस, पाल बागपुर, प्रिं. मेला राम सहित विभिन्न तर्कशील इकाइयों के प्रतिनिधियों और दर्शकों ने सत्र में भाग लिया। इस अवसर पर प्रतिनिधियों के पंजीकरण के लिए तर्कशील कार्यकर्ता मास्टर परमवेद संगरूर, बलराज मौड़, सीता राम बालद कलां, भीम राज बरनाला और गुरदीप सिंह ने जिम्मेदारी बखूबी निभाई, जबकि राजेश अकलिया, बिंदर धनौला और गुरप्रीत शहना ने भोजन और चाय की व्यवस्था की। प्रतिनिधि सत्र का समापन तर्कशील लहर के दायरे को ओर विस्तारित करने तथा एक स्वस्थ समाज और संस्कृति के निर्माण की प्रतिज्ञा के साथ समाप्त हुआ।

तर्कशील इकाई अबोहर की तरफ से डॉक्टर अंबेडकर वेलफेयर सोसाइटी हाकमाबाद राजस्थान के सहयोग से एक तर्कशील समागम का आयोजन किया गया। इस समागम में पत्रिका 'तर्कशील पथ' के संपादक कुलजीत डंगर खेड़ा ने हमारे जीवन में तर्कशील विचारों का क्या महत्व है, के बारे में अपने विचार पेश किए। तर्कशील जादूगर सुखदेव मलूकपुरी और सुखदीप मलूकपुरी ने मैजिक ट्रिक पेश किये और जादू के भेदों के बारे में लोगों को समझाया। विनोद बारेका ने तर्कशील सोसाइटी पंजाब और हरियाणा की तरफ से संपादित की जा रही हिंदी पत्रिका तर्कशील पथ के बारे मे जानकारी दी। काफी लोगों ने पत्रिका के चंदे भी भरवाए। इस अवसर पर किताबों की स्टाल भी लगाई गई। इस समारोह में लाभ सिंह सोलंकी एडवोकेट अध्यक्ष डा. अंबेडकर वेलफेयर सोसाइटी, आद राम नायक नायब तहसीलदार, शंकर लाल, नरेश कुमार, डा. सुनील, सुखा सिंह, जरनैल सिंह, गुरदेव सिंह आदि उपस्थित थे।

रिपोर्ट : - आकाशदीप हाकमाबाद

शहीद-ए-आज़म भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की शहादत को समर्पित सेमिनार में तर्कशीलों की सहभागिता

ग्राम पंचायत बीरूवाला गुड़ा और लोक चेतना कला एवं साहित्य मंच के संयुक्त प्रयासों से शहीदों की याद में उनके विचारों के संदर्भ में वैज्ञानिक चेतना और सामाजिक जागरूकता पर एक शानदार सेमिनार का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम न केवल शहीदों को नमन करने का अवसर था, बल्कि समाज को एकजुट करने और उनकी विरासत को संभालने का भी एक प्रयास था।

इस सेमिनार का मुख्य उद्देश्य आज़ादी संग्राम के इन महान नायकों के बलिदान को याद करना और युवा पीढ़ी को शहीद भगत सिंह के विचारों से प्रेरित करना था। मुख्य वक्ता हरियाणा के सेवानिवृत्त कर्मचारी संघ के अध्यक्ष वज़ीर सिंह थे। उन्होंने बताया कि भगत सिंह के लिए आज़ादी का अर्थ मज़दूरों, किसानों और मेहनतकश वर्ग की वास्तविक खुशहाली था। वह ऐसे देश की कल्पना करते थे जो धर्म, जाति और क्षेत्रीय भेदभाव से ऊपर हो।

राजकुमार शेखूपुरिया ने कहा कि मौजूदा राजनीतिक व्यवस्था किसान-मज़दूर विरोधी है और कुछ कॉर्पोरेट घरानों की रक्षा में लगी हुई है, जिससे आर्थिक असमानता, युवाओं में बेरोज़गारी और सामाजिक असुरक्षा की भावना बढ़ रही है।

तर्कशील सोसाइटी पंजाब की कालांवाली इकाई के सदस्यों ने जादू और वैज्ञानिक प्रयोगों के माध्यम से चर्चित स्वंभू चमत्कारों का पर्दाफाश किया। यह गतिविधि न केवल मनोरंजक थी, बल्कि तर्कशील सोच और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने का भी एक प्रयास था। यह पहल दर्शकों के लिए एक नई सीख लेकर आई और कार्यक्रम को और भी यादगार बना दिया।

मास्टर अजायब जलालाना, शमशेर चोरमार और जगदीश सिंहपुरा ने तर्कशील विचारों और वैज्ञानिक प्रयोग प्रस्तुत किए। इकाई भंगू के मास्टर बलवंत,हरदेव अगरोइया ने तर्कशील पुस्तकों की प्रदर्शनी लगाई।

इस तरह के सेमिनार न केवल शहीदों को याद करने का अवसर प्रदान करते हैं, बल्कि उनके महान विचारों से लोगों को अवगत कराने का भी कार्य करते हैं।

अंत में, गांव के सरपंच सुखविंदर सिंह ने सभी का धन्यवाद किया और ग्रामीणों को आश्वस्त किया कि भगत सिंह के जन्मदिन को एक बड़े तर्कशील नाटक मेले के रूप में मनाया जाएगा, जिससे उनके विचारों को जागरूकता के रूप में प्रसारित किया जा सके।

अजायब जलालाना

जलालाना व चोरमार में शहीदों के बलिदान की याद में प्रोग्राम आयोजित किया गया

शहीद भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की शहादत को समर्पित तर्कशील नाटक मेला दो गांवों जलालाना व चोरमार में दिन और रात को शहीदों के बलिदान को याद करते हुए आयोजित किया गया। दोनों गांवों की ग्राम पंचायतें व गांव वासियों ने तर्कशील सोसाइटी पंजाब की इकाई कालांवली के सहयोग से किया गया।

चंडीगढ़ स्कूल ऑफ ड्रामा की टीम निर्देशक इक्कतर सिंह व सह कलाकारों द्वारा नाटक यह लहू किसका है, ठगी तथा देश नु चलो कोरियोग्राफी के माध्यम से शहीदों के विचारों और उनके संघर्ष को जीवंत किया गया। यह आयोजन न केवल उनकी शहादत की याद को ताज़ा करने, बल्कि समाज में तर्कशीलता, वैज्ञानिक सोच और जागरूकता को बढ़ावा देने का भी एक प्रयास रहा।इस मेले में प्रगतिशील पुस्तक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिसमें शहीदों के जीवन, उनके क्रांतिकारी विचारों और समाज सुधार से जुड़ी पुस्तकों को प्रदर्शित किया गया।मेले के दौरान प्रसिद्ध तर्कशील वक्ता तर्कशील सोसाइटी पंजाब के संगठन मुखी राजिंदर भदौड़ ने अपने प्रभावशाली विचार रखे। उन्होंने अंधविश्वासों के खिलाफ वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया और समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने के लिए तर्कशील सोच को अपनाने का आह्वान किया। उन्होंने बताया अंधविश्वासों गैर वैज्ञानिक घटनाओं के खिलाफ और वैज्ञानिक चेतना के प्रचार प्रसार के लिए तर्कशील सोसाइटी पिछले चालीस वर्षों से संघर्षशील है।

राजपाल सिंह ने शहीद भगत सिंह के विचारों का उल्लेख करते हुए बताया कि कैसे वे अंधविश्वास और रूढ़िवादिता के खिलाफ थे और एक समतामूलक समाज की स्थापना के लिए लड़े।यह आयोजन स्थानीय लोगों के लिए प्रेरणादायक रहा और शहीदों के बलिदान को आधुनिक संदर्भ में जीवंत करने का एक सशक्त माध्यम बना। दोनों गांवों में उपस्थित दर्शकों ने नाटकों, पुस्तक प्रदर्शनी और वक्तव्यों के माध्यम से शहीदों के विचारों को आत्मसात किया। चमत्कारों का पर्दाफाश करते हुए सुखदेव मलूकपुरी तर्कशील जादूगर ने अपनी आइटमों को पेश करके सिद्ध किया कि दुनियां में किसी के पास भी दैवीय जादू शक्तियां नहीं होती।

कुलदीप सिरसा ने अपनी डफली के साथ जनपक्षीय गीत गाकर लोगों को सामाजिक यथार्थ के दर्शन करवाए । ग्राम पंचायत जलालाना के सरपंच अंग्रेज सिंह, स्कूल प्रिंसिपल सुभाष चंद्र ने अध्यक्षता की मुख्य अतिथि समाज सेवी विनोद मित्तल व खंड शिक्षा अधिकारी विनोद श्योराण, इसके इलावा विशेष तौर पर पूर्व एमएलए बलकौर सिंह,करनैल सिंह ओढ़ा, गुरतेज सिंह सुखचैन, अध्यापक संघ जिला प्रधान वीर सिंह, बूटा सिंह, सर्वकर्मचारी संघ से सोहन सिंह रंधावा, कुलदीप जलालाना, जसवंत, हरदेव अग्रोइया, बलजीत सिंह आदि गणमान्य लोग बड़ी संख्या में पहुंचे हुए थे गांव चोरमार के सरपंच जतिंदर सिंह की अध्यक्षता में चोरमार गुरुद्वारा के सेवादार गुरपाल सिंह जी मुख्य महमान के इलावा विशेष तौर पर केवी सिंह, कुलदीप गुदराना, अध्यापक संघ के जिला सचिव देवेंद्र कुमार, मंदीप मिंटा दशमेश युवा क्लब चोरमार व तर्कशील सोसाइटी कालांवली के सदस्य व आस पास के लोग बड़ी संख्या में पहुंचे हुए थे, इन दोनों मेलों में महिलाओं की संख्या बहुत बड़ी थी मंच संचालन तर्कशील इकाई कालांवली मुखी शमशेर चोरमार व जगदीश सिंहपुरा ने संयुक्त रूप से किया।

अजायब जलालाना
9416724331

बाला रानी की शोक सभा

तर्कशील सोसायटी हरियाणा के राज्य कार्यकारिणी सदस्य कृष्ण चन्द,पुंडरी की पत्नी सरोज बाला रानी की 8 अप्रैल 2025 को आकस्मिक मृत्यु हो गई थी, जिनके मृतक शरीर को मृत्यु पहले भरे शरीर प्रदान शपथ पत्र के अनुसार परिवार ने चिकित्सीय उपयोग हेतु कल्पना मेडिकल कालेज, करनाल (हरियाणा)को प्रदान कर दिया।

इसके उपरांत परिवार ने 13.4.2025 को पुंडरी में अपने निवास स्थान पर बिना कोई धार्मिक कर्मकाण्ड करते हुए आदरांजलि सभा का आयोजन किया,जिसमें परिवार के सदस्यों, रिश्तेदारों, मित्रो, तर्कशील सोसायटी की राज्य कार्यकारिणी सदस्यों के साथ ही कुछ कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया।

इस सभा में मंच संचालन सोसायटी प्रधान डाक्टर राजेश पेगा ने किया। सभा में इतिहास के प्रोफेसर डा .महेंद्र विवेक ने मृत्यु के उपरांत विभिन्न समाजों में मृतक शरीर के निस्तारण के विभिन्न तरीकों का विवरण दिया एवं स्पष्ट किया कि इंसान जिस भौगोलिक परिस्थिती में रहता है उसी के अनुसार उसके जीने और मरने के संस्कार बनते हैं समुद्र के किनारे रहने वालों के खान पान और मरने पर होने वाले क्रिया कलाप अलग होते है। मरुस्थल भूमि में रहने वालों में दफन करने की परम्परा बनी और मैदानी व पेड़ों वाले स्थानों में रहने वालों में शव दहन की परंपराएं बनी जो बाद में धार्मिक परंपरा में बदल गई। पत्रिका तर्कशील पथ के संपादक गुरमीत अंबालवी ने मृतक शरीर मेडिकल कालेजों को प्रदान करने के तरीकों पर प्रकाश डाला और शरीर प्रदान के साथ ही नेत्र प्रदान के महत्व को रेखांकित किया।

कृष्ण चन्द ने अपनी पत्नी सरोज बाला रानी के उनके जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने एवं उनके सामाजिक जीवन में सक्रियता को बताते हुए कहा कि उन्होंने जीते जी मृतक शरीर प्रदान करने की इच्छा को जाहिर किया था । वह पड़ोस व रिश्तेदारी में सभी सामाजिक आयोजनों में खुशी से शामिल होती थी। सभा में उनके पुत्र पुत्रियों ने भी अपने विचार रखे।

सभा में तर्कशील साथी हरबिलास, रामेश्वर आजाद, कृष्ण लाल, सुभाष तीतरम, ईश्वर सिंघ पूरा आदि ने भी अपने विचार रखे। सभी साथियों ने शोक व्यक्त के साथ ही परिवार के द्वारा इस साहसिक कार्य पर शाबाशी दी।

रिपोर्ट : गुरमीत अंबालबी

ग़दरी नायकः करतार सिंह सराभा

(जन्म तिथिः 24 मई, 1896)



कैलिफोर्निया में अध्ययन करने गए एक उत्साही युवक करतार सिंह सराभा ग़दर पार्टी के संपर्क में आये। देश को आज़ाद कराने की अपनी बुलंद भावना के कारण वह ग़दर आंदोलन में शामिल हो गए। जब ग़दर अख़बार प्रकाशित हुआ तो वे उसे लोगों तक पहुंचाने में जुट गए।

16नवम्बर 1915 को साढ़े उन्नीस वर्षीय युवा करतार सिंह सराभा को उनके छह अन्य साथियों के साथ लाहौर जेल में फांसी दे दी गई। वह ग़दर पार्टी के एक युवा जरनैल थे। वह उच्च कोटि की भावनाओं वाले व्यक्ति थे तथा भारत को स्वतंत्रता करवाने के लिए मरने को तैयार थे। युवावस्था में ही मौत का फंदा चूमने वाला यह देशभक्त युवक देश और दुनिया के लिए मिसाल बन गया।

ऐसा ही एक उल्लेख बाबा सोहन सिंह भकना के संस्मरणों में मिलता है। सराभा ने जेल की दीवार पर लिखा था, ''शहीद का खून व्यर्थ नहीं जाता।'' अंततः इसका फल मिलेगा। बाबा भकना ने कहा, ''करतार सिंह, यहां जेल में तो हड्डियां भी सड़ती हैं, बाहर खबर कैसे फैलेगी और शहीदों का खून कैसे रंग लाएगा?'' सराभा का उत्तर था, ''सर, आज नहीं तो कल या परसों, हम बाहर जाएंगे और खून रंग लेकर आएगा।''

–डॉ. चमन लाल

क्रांतिकारी नायक : भगवती चरण वोहरा

(शहादत : 28मई, 1930)



मैं 1926में ही भगत सिंह से मिल चुका था। जब अप्रैल 1928में नौजवान भारत सभा का घोषणापत्र प्रकाशित हुआ, तो पता चला कि इसका मसौदा मूल रूप से भगवती चरण ने भगत सिंह के परामर्श से तैयार किया था। मैं घोषणापत्र में कही गई कुछ बातों से प्रभावित हुआ। जिससे मेरे हृदय में भगवती चरण के प्रति अपार श्रद्धा की भावना उत्पन्न हो गयी।

भगवती चरण का जन्म 1903 में आगरा में हुआ था। पिता पंडित शिव चरण वोहरा रेलवे में उच्च पद पर थे। भगवती का परिवार आर्थिक रूप से संपन्न था। उनकी शादी भी कम उम्र में ही हो गई थी। 1921 में गांधीजी के निमंत्रण पर भगवती चरण असहयोग आंदोलन में शामिल हो गए। आंदोलन वापस ले लिए जाने के बाद, उन्होंने अपने साथियों के साथ लाहौर के नेशनल कॉलेज में प्रवेश लिया। यहीं पर उनकी मुलाकात क्रांतिकारी युवकों से हुई। उन्होंने इमारत के दरवाजे पर लगे कीमती और सुंदर पत्थर की बजाय आधारशिला का पत्थर बनना पसंद किया। वह जानते थे कि खुद पीछे रहते हुए दूसरों को आगे बढ़ने का अवसर कैसे प्रदान किया जाए। संगठन की गंभीर समस्याओं पर उनका पूर्ण नियंत्रण, क्षमता और अधिकार था। ये गुण भगत सिंह और भगवती चरण दोनों में मौजूद थे।

विश्व प्रसिद्ध मेरठ कम्युनिस्ट षडयंत्र केस में भी उनके घर की तलाशी ली गई थी। घर की तलाशी के दौरान घर की दीवारें और फर्श तोड़ दिए। भगवती चरण को गिरफ्तार नहीं किया जा सका क्योंकि वह उस समय घर पर नहीं थे। फिर, असेंबली बम कांड के बाद लाहौर में बम फैक्ट्री पकड़ी गई। पता चला कि फैक्ट्री वाला मकान भगवती चरण के नाम पर लिया गया था। उनके नाम पर वारंट भी जारी किये गये।

मई 1930 में भगत सिंह और दत्त को जेल से रिहा करवाने की योजना को अंतिम रूप दिया गया। यह तय किया गया कि रविवार को जब भगत सिंह और दत्त अपने अन्य साथियों के साथ लाहौर की बोस्ट्रल जेल से बाहर आएंगे, तो पुलिस वाहन पर हमला करके उन्हें रिहा करवाया जाएगा। इस कार्य के लिए जाने वालों में आजाद व अन्य साथियों के साथ भगवती ने भी इस पर जोर देकर अपना नाम भी शामिल करवा लिया। उन्होंने यशपाल को बम तैयार करने को कहा। 28मई 1930 को बैशम्पायन, भगवती चरण और सुखदेव राज सुबह दस से ग्यारह बजे बम विस्फोट करने के लिए रावी नदी के किनारे घने जंगल में गए। सुरक्षित स्थान देखकर वे रुक गए। सामने एक बड़ा गड्ढा था। बम का परीक्षण उसी स्थान पर किया जाना था। भगवती ने बम की पिन निकाल ली, लेकिन उसे फेंकने के लिए अपना हाथ नहीं उठा सके। बम उसके हाथ में ही भयानक रूप से फट गया। धुएँ का एक बादल उठा। भगवती भाई गंभीर रूप से घायल हो गये। उसका एक हाथ कलाई से उड़ गया था। इतनी शारीरिक पीड़ा के बावजूद उनके चेहरे पर मुस्कान वैसी ही बनी रही। यह मृत्यु का उपहास करने का एक बड़ा साहस था। मौत से संघर्ष जारी रहा, लेकिन मौत जीत गयी। उन्होंने देश की आजादी के लिए अपना बलिदान दे दिया। क्रांतिकारी पथ की रोशनी का एक चमकता सितारा हमेशा के लिए डूब गया।

शिव वर्मा (भगत सिंह के साथी)



सूबा डैलिगेट इजलास को सम्बोधन करते हुए प्रसिद्ध जमहूरी चिंतक हिमांशू कुमार जी



नई चुनी गई सूबा कार्यकरणी



इजलास में हाजिर डेलीगेट और दर्शक

If undelivered please return to :

Tarksheel

Tarksheel Bhawan, Tarksheel Chowk,
Sanghera By Pass, BARNALA-148101
Post Box No. 55
Cell. 98769 53561, 98728 74620
Web : www.tarksheel.org
e-mail : tarkshiloffice@gmail.com

BOOK POST
(Printed Matter)

To ....

....

....